सिद्धयोग

2017

संस्थापक : योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

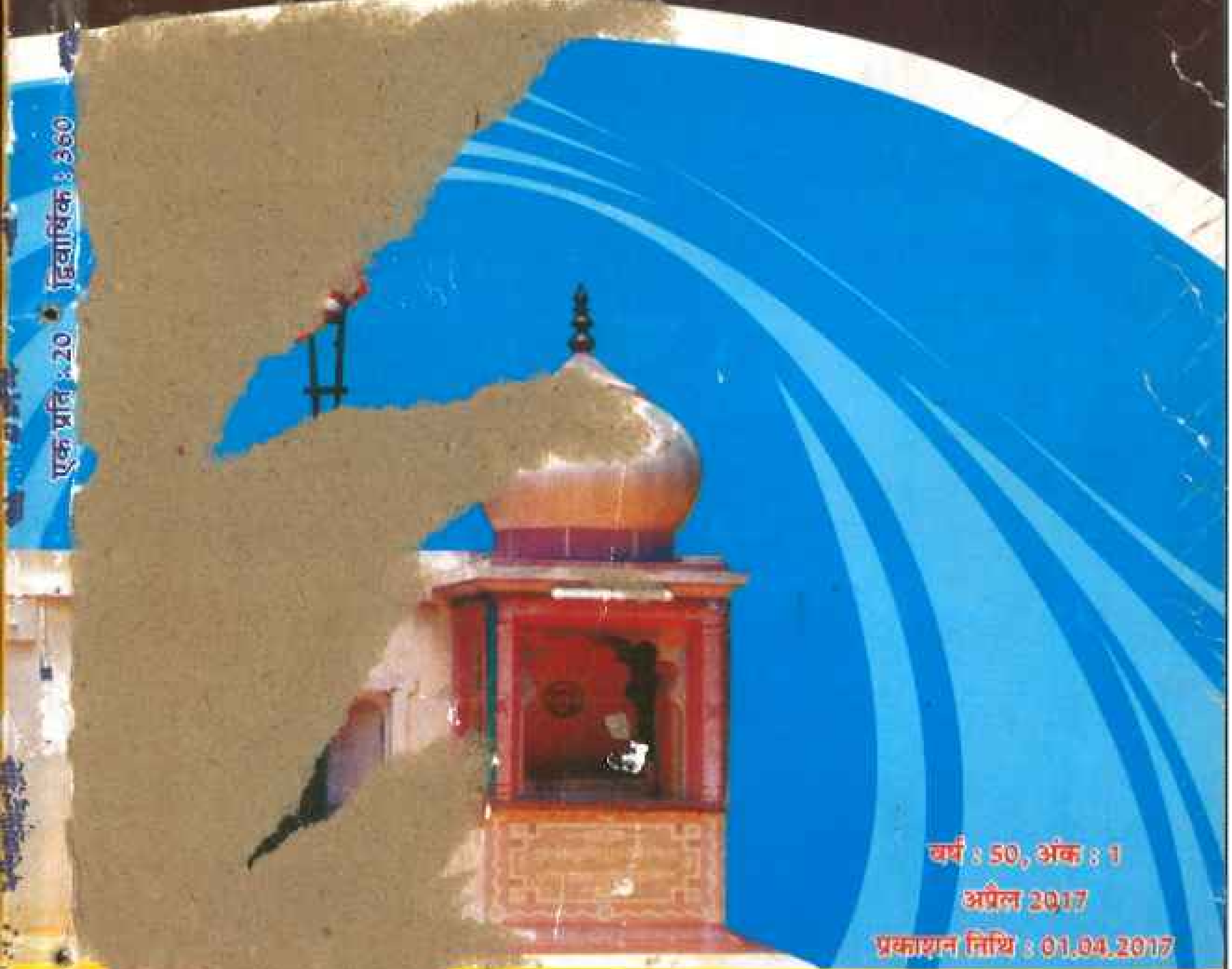

एक प्रति : 20 • द्विवार्षिक : 360

वर्ष : 50, अंक : 1
अप्रैल 2017
प्रकाशन तिथि : 01.04.2017

श्रीरामनवमी जन्म...
विशेषांक

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन
सवाँई-283202 (आगरा) उ.प्र.

अमृत कण

भगवान् को प्रसन्न करने वाले आठ भाव पुष्प

अहिंसा प्रथमं पुष्पं पुष्पमिन्द्रिय निग्रहः
सर्व पुष्पं दया भूते पुष्पं शान्तिर्विशिष्यते।।
शमः पुष्पं तपः पुष्पं ध्यान पुष्पं च सप्तमम्
सत्यं चैवाष्टमं पुष्पमेतैस्तुष्यति केशवः
एतैरेवाष्टभिः पुष्पैस्तुत्येवार्चितो हरिः
पुष्पान्तराणि सन्त्यत्र बाह्यानि मनुजोत्तम।।

(अग्नि पुराण)

अर्थात्

अहिंसा प्रथम पुष्प है। इन्द्रिय निग्रह (इन्द्रियों को मनमाने विषयों में न जाने देना) दूसरा पुष्प है, प्राणिमात्र पर दया तीसरी सर्वोपयोगी पुष्प है। शान्ति (किसी भी अवस्था में चित्त को क्षुब्ध न होने देना) चतुर्थ पुष्प सबसे बढ़कर है। 'शम ' अर्थात् मन को वश में रखना पाँचवा पुष्प है। तप छटा पुष्प है। ध्यान (इष्ट देव में तदाकार वृत्ति)सातवाँ पुष्प है और आठवाँ पुष्प 'सत्य' है। इन पुष्पों से भगवान केशव प्रसन्न होते हैं। इन्हीं अष्ट पुष्पों से पूजित होने पर ही श्री हरि प्रसन्न होते हैं। हे मनुष्यों में श्रेष्ठ ! इनके अतिरिक्त बाह्य पुष्प भी इस भूमण्डल पर हैं।

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक-पत्र

वर्ष :50
अंक : 1

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्धं स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणां भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

अप्रैल
2017

श्रीसमचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये।।

मन से श्रीराम चरणें का चिन्तन, वचन से श्रीरामचरणों का गुणगान, सिर से श्रीरामचरणों में नमन और अन्ततः उन्हीं चरणों की शरण लेता हूँ।

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सवांई (एत्मादपुर) आगरा

SIDDHYOG
HINDI MONTHLY

संस्थापक :
योग–योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक :
आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक :
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक :
समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष
एवं गुरु भाई–बहिन

इस अंक में ...

1. विशेष लेख – योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज 3
2. विशेष लेख – योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज 10
3. सम्पादकीय 14
4. श्रीमद् भागवत में योग–परिचर्चा– डॉ. विजय सिंह 17
5. ऊँ श्री रामलाल प्रभवे नमः – अमरनाथ सक्सेना 20
6. साधक तन और मन का आहार – डॉ. कमल 23
7. योगावतार प्रभु श्री रामलाल जी महाराज – दिनेश चन्द्र शर्मा 33
8. प्रभु का प्यार – भानुदत्त त्रिपाठी 36
9. सहयोग राशि के नाम 37
10. सीवन (अमराई धाम) रायबरेली का योग प्रचार कार्यक्रम 39
11. योग–आसन 40

एक प्रति	: रु. 20.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 180.00
द्विवार्षिक	: रु. 360.00
आजीवन (10 वर्षीय केवल)	: रु.1000.00

मेरे श्री गुरुदेव

योग–योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

मैं अपने श्री गुरुदेव के चरणारविन्द की महिमा किन शब्दों में लिखूँ यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। गुरुदेव एक ऐसा शब्द है जो सभी के लिए मान्य है और हर व्यक्ति जो किसी भी प्रकार से गुरुदेव की शरणागति प्राप्त कर चुका है, उसके लिए उसके गुरुदेव पूर्ण ब्रह्म हैं। साधक जब तक गुरुदेव के स्वरूप में ईश्वर बुद्धि धारण नहीं करता तब तक वह परम श्रेय के पथ का पथिक नहीं बन सकता, इसलिए भारतीय संस्कृति का ज्ञान रखने वाली भारतीय जनता अपने–अपने गुरुदेव के चरणारविन्द में पूर्ण ईश्वर बुद्धि रखती है व श्री गुरुदेव के चरणारविन्दों में न्यौछावर होना अपना परम पुनीत सौभाग्य समझती है। गुरुदेव क्या हैं और उनका स्वरूप क्या है? यह एक पृथक लेख का विषय है, जिसका प्रकाशन इस पत्र के किसी अंक में अवश्य होगा। फिर भी मैं इतना बतला देना उचित समझता हूँ कि गुरुदेव के दो स्वरूप होते हैं, एक उनका अपना निज स्वरूप और दूसरा साधक की श्रद्धा से निर्वाचित स्वरूप। जगदात्मा भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने मुखारविन्द से श्रीमद्भगवद्गीता के 17वें अध्याय में कहा है–

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः।।

अर्थात् परमात्मा का रूप श्रद्धामय है, जैसी जिसकी श्रद्धा होती है वैसा ही उसमें सच्चिदानन्द घन नित्य चेतन का स्वरूप होता है। श्रद्धा साधक के अपने ह्रदय का पवित्र उद्गार है। श्रद्धावान् व्यक्ति जिसके विषय में जो सोचता है वहीं से उसको ईश्वरीय शक्ति मिल जाती है। धन्ना जाट, नामदेव आदि के जितने उदाहरण मिलते हैं वह सबके सब श्रद्धा के ही उज्जवल प्रतीक हैं। किसी साधारण व्यक्ति को ईश्वरीय भावना से देखना यह भक्त के ह्रदय की पवित्र भावना है व ईश्वर का ईश्वर होना उसकी अपनी यथार्थता है। गुरुदेव के विषय में भी सभी आस्तिक लोगों की ईश्वरीय भावना होती है और अपनी भावना के अनुरूप ही वह लोग फल को पा लेते हैं ''यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।'' इसके अतिरिक्त यदि श्रद्धेय पुरुष परिपूर्ण है और साधक श्रद्धा का पुतला है तो अभीष्ट लाभ में कोई शंका का स्थान है ही

नहीं। मेरे गुरुदेव जिनके विषय में यह पंक्तियाँ लिखने लगा हूँ सिद्धों के महा सिद्ध, सर्व समर्थ योगयोगेश्वर व सर्वतः परिपूर्ण हैं। उनकी पवित्र ख्याति को बहुत ही कम लोग जान पाये हैं। सम्भव हो सकता है इस विषय में उनका अपना ही संकल्प हो किन्तु उनके चरणारविन्दों के चिन्तन करने वाले सर्वसाधारण जन समुदाय के अन्दर जो–जो चमत्कारिक घटनायें घटित होती रहती हैं उनका इस छोटे–से लेख के अन्दर लिखना भी संभव नहीं हो सकता।

उनकी पवित्र जन्म भूमि अमृतसर (पंजाब) है। अमृतसर में ज्योतिष विद्या के गण्यमान्य विद्वान् महामान्य पं. गण्डाराम जी ज्योतिषी के घर में उनका पवित्र अवतरण हुआ। लगभग बारह या चौदह वर्ष की आयु तक बाल–क्रीड़ा करते हुए घर पर रहे। उसके बाद तीव्र वैराग्य के भावों से प्रेरित होकर घर से निकल पड़े और कुछ दिन साधु समुदाय के अन्दर घूमते हुए निर्जन वनों में भ्रमण करने लगे। उसमें सब से बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि जहाँ–जहाँ पर कोई पहुँच वाला सन्त मिलता और मेरे गुरुदेव जी के स्वरूप को पहचानता वही गद्‌गद् कण्ठ होकर स्तुति करता और कृपा की भीख माँगता। इन पंक्तियों में मैं अपने गुरुदेव जी के जीवन चरित्र के विषय में कुछ लिखूँ, यह मेरा लक्ष्य नहीं है। फिर भी इतना कह देना तो आवश्यक ही है कि अपने बाल्यकाल में ही वह घटनायें घटीं जो सर्वसाधारण के जीवन में कभी हो नहीं सकतीं। चार साल की उम्र में माता–पिता को दिव्य ज्योति का अनुभव कराना, छः साल की उम्र में वृद्धा पड़ोसिन जो मरणासन्नावस्था में थी उसके सिर पर अपने कर–कमल का स्पर्श कर पूर्ण गति का वरदान देना, लगभग 9 वर्ष की अवस्था में अमृतसर के पास रामतलाई पर दर्शनार्थ आने के इच्छुक महात्माओं को स्वयं ही जाकर दर्शन देना, चौदह या पन्द्रह साल की उम्र में वनों को जाते हुए मुरादाबाद की तरफ से निकलते हुए किसी गाँव में किसी कुम्हार के लड़के के सिर पर कर स्पर्श करके दिव्यानुभूति कराना व खेचरी मुद्रा की पूर्णता का वरदान देना उनके जन्मजात सहज सामर्थ्य का पूर्ण परिचायक है। किन्तु फिर भी लोक–लीला का अनुसरण करते हुए जंगलों में विचरते रहे और अपनी इस वन–यात्रा में कई तपस्वी साधुओं पर परमानुग्रह कर उनको सफल मनोरथ बनाया और अपने आप थोड़े ही समय के अन्दर नेपाल हिमालय को चले गये। नेपाल की राजधानी काठमांडू से ऊपर जहाँ बागमती गंगा का उद्‌गम स्थान है, वहाँ से कुछ दूर चल कर किसी झार–खण्ड में रह कर घोर तपस्या का जीवन व्यतीत करते रहे। उस स्थान पर ही स्वयं सदा शिव स्वरूप एक महापुरुष आये जो मेरे श्री गुरुदेव जी को हिमालय के हिमाच्छादित प्रदेश में आकाश मार्ग से ले गये और एक स्थान पर छोड़ दिया। केवल दो एक बातें बतलाई। एक नर–भक्षक जड़ी दिखलाई और कहा कि यह जड़ी नर–भक्षक है, मनुष्य को खा जाती है। दूसरी बात कि तुम यहाँ रहो, यह कह कर वह

महापुरुष अपनी गुफा में जाकर के समाधिस्थ हो गये। उस स्थान से 6–6 मील 7–7 मील की दूरी पर कोई–कोई सिद्ध महापुरुष रहते थे। मेरे श्री गुरुदेव विचरते हुए उन लोगों से मिले। उन लोगों ने बताया, यह महापुरुष सदाशिव हैं और कई हजार वर्षों से यहाँ पर बैठे हुए हैं। यही सिद्धियों के दाता स्वयं महासिद्ध हैं और छः महीने में एक बार समाधि से उठते हैं। श्री प्रभुजी मेरे गुरुदेव अपने मुखारविन्द से यह बतलाते थे कि जब तक श्री महाप्रभु जी समाधि से उठे तब तक उनकी अपनी भी कई रोज की समाधि लग उठी थी। इसका अर्थ यही है–'गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यस्तुछिन्नसंशयाः।' अर्थात् गुरुदेव का चुपाचुपी का व्याख्यान हो और शिष्यों के संशय स्वतः ही नष्ट होते चले जायें। यही सद्‌गुरु तत्व की महत्ता है। सामर्थ्यवान् गुरुदेव को बहुत उपदेश करने की आवश्यकता नहीं होती उनका संकल्प ही ''कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुम्'' की शक्ति रखता है। मेरे श्री गुरुदेव हिमालय के उन हिमाच्छादित शिखरों पर लगभग 12 वर्ष रहे और फिर संसार के पतित एवं वेदनापूर्ण दुःखी जीवों को देखकर उन दयासागर जी के मन में दया के भाव उमड़े और उन्हें संसार के आधिव्याधियों से पीड़ित दुःखी प्राणियों को पवित्र योग मार्ग का पथ प्रदर्शन करने के लिए श्री कृपानिधि जी भू–मण्डल पर लौट आये। श्री गुरुदेव जी अपने मुखारविन्द से यह कहा करते थे कि हिमालय के हिमाच्छादित शिखरों पर बैठ करके आधि–व्याधियों से पीड़ित दुःखाक्रान्त जीवों को देखा और उनके भले की भावना पूर्णरूपेण मन में जाग उठी, अतः पुनः संसार में आ करके प्राणी मात्र के भले के लिए पवित्र योग–मार्ग के प्रचार का आरम्भ कर दिया–

प्रज्ञाप्रासादमारूहय अशोच्यः शोचतो जनान्।
भूमिष्ठानिव शैलस्थः सर्वान् प्राज्ञोऽनुपश्यति।।

अर्थात् प्रज्ञा–प्रासाद पर आरूढ़ हुए योगिराज संसार वालों को इस प्रकार देखते हैं जैसे पर्वत शिखर पर बैठे हुए व्यक्ति भूमि वालों को देख लिया करते हैं। ठीक इसी उदाहरण के प्रतीक बन कर मेरे श्री गुरुदेव भू–मण्डल पर आये और उन्होंने योग–प्रचार का पवित्र कार्य प्रारम्भ कर दिया। श्री प्रभुजी ने अवनी–मण्डल पर आकर तीन प्रकार के कार्य आरम्भ किये–

(1) **योग के सरल साधनों द्वारा रोग निवृत्ति।** इसमें भी सबसे विशेष बात यह थी; निज निर्मित साधनों का प्रचार। उनमें उनका एक प्रमुख साधन था; 'जीवन तत्व साधन' इस जीवन तत्व साधन के अन्दर नौ क्रियायें हैं, जिनके करने से लोगों को अद्‌भुत व आश्चर्यजनक लाभ होता है। इस साधन के अन्दर सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह लगातार विधि–विधान पूर्वक करने से पेट में इस प्रकार की अग्नि पैदा करता है जिसको 'वृक' अग्नि कहते हैं। जिस प्रकार जंगली जानवर भेड़िया को हर समय भूख लगती रहती है, उसी प्रकार इन साधनों के करने से मनुष्य को हर समय भूख लगती रहती है। पेट में एक अग्नि सी धधकती सी मालूम पड़ती है।

वह अग्नि तब तक बन्द नहीं होती जब तक मनुष्य का स्वास्थ्य पूर्णरूपेण ठीक न हो जाये। इसके साथ-साथ इस साधन के अन्दर एक प्रमुख विशेषता यह है कि इस साधन को करते हुए बच्चे का ध्यान करने की एक विधि है जिससे मन की एकाग्रता बनकर स्वाभाविक लाभ होता है और बच्चा दीखने लगता है। इस बच्चे के देखने का आह्लाद हर समय बना रहता है और उससे अधिकांश रोग की निवृत्ति हो जाती है। इसके साथ ही साथ दृढ़तर अभ्यास करने के बाद वही बच्चा श्रीकृष्ण आकृति में बदल जाता है, और साधक का अध्यात्म में प्रवेश हो जाता है। इस साधन का नाम है जीवन तत्व साधन।

'जीवन तत्व साधन' को हमने पुस्तक के रूप में प्रकाशित करा दिया है। इसका सभी को अवलोकन करना चाहिए। इन क्रियाओं के लिए समय का विभाजन इस प्रकार रखना चाहिए—

1. सर्वोत्तान — केवल तीन बार समय केवल अधिक से अधिक दो मिनट।
2. स्कन्ध चालन — समय पन्द्रह मिनट।
3. पादचालन — आठ मिनट।
4. नाभिचालन — पन्द्रह मिनट।
5. जानुप्रसार — दोनों ओर से तीन बार, समय लगभग चार मिनट।
6. बालमचलन — केवल एक मिनट।
7. बच्चे का ध्यान — पाँच मिनट।
8. नाड़ी संचालन — पन्द्रह मिनट।
9. उत्क्षेपण — केवल एक या दो मिनट।

इसी प्रकार यदि क्रियायें अधिक बढ़ानी हैं तो समय अधिक बढ़ाया जा सकता है। सभी प्रकार की बीमारियों में मेरे गुरुदेव के अपने मन से प्रकट किया हुआ यह जीवन तत्व साधन अमृत के समान परम लाभदायक है। इसमें भी बच्चे का ध्यान सब प्रकार से लोक व परलोक के लिए परम श्रेयस्कर है।

इसके अतिरिक्त राजयक्ष्मा के क्षीण रोगियों के लिए गुरुदेव जी ने अपने मन से अमर तत्व साधन को निकाला।

(2) अमर तत्व साधन—जिसमें केवल क्षीर समुद्र का ध्यान किया जाता है और हाथ-पैरों को इस प्रकार से चलाया जाता है जिस प्रकार हम समुद्र में तैर रहे हों। जो साधक श्री गुरुदेव की परम कृपा से अपने को क्षीर-सागर में तैरते हुए देखने लग जाते हैं, उनका राज-यक्ष्मारोग बहुत थोड़े दिन में दूर हो जाता है और उनको इतनी प्रसन्नता होती है कि उसमें उनकी समस्त बीमारियाँ भाग जाती हैं और बहुत ही थोड़े दिन के अन्दर अपने आपको पूर्ण स्वस्थ देखने

लगते हैं। प्रथम बार श्री गुरुदेव जी यह जीवन तत्व व अमर तत्व आदि साधन ही लोक–हितार्थ कराया करते थे; किंतु कुछ समय बाद नेती, धौति, न्यौली, बस्ति, गजकरणी आदि क्रियायें भी अधिकारी देखकर कराने लगे। इसके अतिरिक्त अन्य आसन, बन्ध, मुद्रायें और विभिन्न प्रकार की गुप्त क्रियाओं का शिक्षण भी आरम्भ कर दिया, यह सबसे बड़ा काम उन्होंने संसार में आकर किया।

(3) **शक्तिपात दीक्षा**–जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं हो सकता। हमारे शास्त्रों में योग का वर्णन दो प्रकार से मिलता है, सिद्धयोग और साधन योग। साधन योग में मनुष्य साधन करता–करता शनैः–शनैः अपने चरम लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है और सिद्धयोग में सिद्धानुग्रह से ही मनुष्य का उत्थान हो जाता है और उसकी प्रगति इतनी ऊँची होती है कि जिसे वह अपने पुरुषार्थ से अनेक जन्म में भी नहीं प्राप्त कर सकता। सिद्धयोग के दाता पूर्ण सद्गुरु सिद्ध योगिराज ही हो सकते हैं और वही लोग शक्ति संचार भी कर सकते हैं। इस 'सिद्धयोग' का प्रारम्भ भगवान् सदाशिव से हुआ। पुराणों में हिमालय के घन–घोर जंगलों में होने वाले एक सिद्धाश्रम की चर्चा मिलती है, जिसमें भगवान् सदाशिव के शिष्य–प्रशिष्य योगाचार्यगण निवास करते हैं, यह सभी लोग महासिद्ध हैं और समय–समय पर संसार में व्यस्त गृहस्थ जनों को सन्मार्ग–दर्शन के लिए संसार में आया करते हैं। यह लोग सर्व समर्थ महापुरुष हैं। यही लोग शक्ति संचार कर सकते हैं। मेरे श्री गुरुदेव भी इन सबकी तरह एक अनादि महासिद्ध हैं। उन्होंने संसार में आकर शक्ति पात दीक्षा देनी प्रारम्भ की।

उनके कृपा–फल को प्राप्त कर कितने ही सैंकड़ों की संख्या में साधु जंगलों में समाधि लगा रहे हैं, और तत्व विजयी होकर अपने शरीरों को एक सुन्दर नवयुवक के समान रखते हैं। कितने ही साधु षट्चक्रों का भेदन करके लोक–लोकान्तरों में गमन करने की शक्ति वाले हो गये और स्वायत्ततनु होकर हिमालय की कन्दराओं में निवास कर रहे हैं। मेरे गुरुदेव योग–योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज सन् 1914 के लगभग हरिद्वार के कुम्भ मेले में प्रथम बार हिमालय से उतर कर आये। जिन जीवों के संस्कार उनके चरणारविन्द में उन्हें ले आते हैं या जो इस पवित्र योग–मार्ग के जिज्ञासु हैं उनको पवित्र योग–मार्ग का अनुयायी बनाकर चरम लक्ष्य की ओर अग्रसर करना, हरिद्वार कुम्भ मेले के समय उनके अपने संकल्प से ही उनके कुटुम्बी जनों ने उन्हें पहिचाना और साधारण चर्चाओं में ही तर्क वितर्क करने लगे कि महाराज जी आप कहीं पर किसी स्थिति में रहें, अब हम आपको अवश्य ही पहचान लेंगे। श्री महाराज जी ने उन लोगों से कहा कि भाई! हम साधू हैं तुम्हें हमसे आग्रह नहीं करना चाहिए। तुम अपना कार्य करो हम अपना कार्य करेंगे। किंतु वे लोग नहीं बदले। आग्रह करते ही रहे। इसी बीच में उन्होंने आश्चर्य

देखा कि उनसे बात करते–करते ही श्री गुरुदेव जी वहीं अन्तर्धान हो गये। वह लोग लाख प्रयत्न करने पर भी उनका अन्वेषण नहीं कर सके। अपनी हठ–धर्मी का दुष्परिणाम पाकर उन सभी को महान् दुःख हुआ। किन्तु उनको यह भी ज्ञान हो गया कि यह हमारे कुटुम्बी भाई बन्धु ही नहीं हैं किन्तु कोई सामर्थ्यवान् परम योगिराज हैं। श्री गुरुदेव जी की इस प्रभुता को जानकर लोगों ने अत्यन्त विनय की, जिसके फलस्वरूप श्री प्रभुजी वहीं प्रकट हो गये किन्तु एक बालक के रूप में। उस बालक को यह लोग नहीं पहचान सके। सोचते रहे यह कोई 15–16 साल का बालक है। कहीं कुम्भ मेले में आया होगा, हमारे पास आकर बैठ गया है। किन्तु इन लोगों की अनभिज्ञता को देखकर उस बालक के रूप में छिपे हुए सर्व समर्थ सिद्धों के सिद्धेश्वर मेरे गुरुदेव उनसे मुस्करा कर कहने लगे कि भाई तुम किस चिन्ता में हो? किसका अन्वेषण कर रहे हो? उन लोगों ने कहा: ब्रह्मचारी जी! हमारे एक भाई साधू रूप में अभी–अभी यहाँ थे, किन्तु पता नहीं कहाँ चले गये हैं? हमने उनके साथ बड़ा आग्रह किया था, उस आग्रह का हमें भारी पश्चाताप है। जब वह लोग यह कह ही रहे थे तो उनको बड़ा आश्चर्य हुआ कि वहाँ कोई ब्रह्मचारी नहीं है, प्रत्युत योग योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज हैं। इस अद्भुत घटना को देखकर सभी कुटुम्बी जनों ने निश्चय कर लिया कि यह केवल मात्र हमारे कुटुम्बी ही नहीं हैं, किन्तु इस आकृति में छिपे हुए कोई सर्वसमर्थ योगिराज हैं उसके बाद उन्होंने श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में कोई हठ नहीं की और अपने–अपने घरों को लौट गये। कुछ लोगों ने श्री प्रभुजी को अमृतसर ले जाने का हठ किया श्री प्रभुजी की स्वयं अपनी इच्छा थी ही इसलिए वह हिमालय से उठकर के आये। उनके हठ को स्वीकार करके अमृतसर चले गये और वहाँ जाकर कुछ समय के लिए पण्डित वेष में रहने लगे। यह श्री प्रभु जी का गृहस्थ वेष था। इस वेष में उनको कोई पहचान नहीं सकता था। केवल अपने निवास स्थान पर रहते हुए जिस समय वन की बात किया करते थे सुनने वाले समझते थे कि इतने घनघोर जंगलों में सम्भवतः नहीं गये होंगे। अचानक इन्हीं दिनों में एक घटना घटी। अमृतसर में हाल दरवाजे से बाहर एक सराय है, जिसको सन्तराम की सराय कहते हैं। उसमें एक परम तेजस्वी देदीप्यमान मुख–मण्डल वाले एक महात्मा आकर समाधिस्थ होकर बैठ गये। वह बिल्कुल नग्न थे। तीन दिन व तीन रात्रि बिना कुछ खाये पिये समाधि स्थिति में वह महात्मा वहीं बैठे ही रहे। सारे शहर में उनकी प्रख्याति फैल गई। दर्शकों की भारी भीड़ उनके पास एकत्र हो गई। श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में जाकर गृहस्थी लोगों ने प्रार्थना की श्री महाराज जी! आप बड़े–बड़े जंगलों में हो आये हैं, किन्तु अभी तक आपको इस प्रकार के सिद्ध योगिराज जी नहीं मिले होंगे जैसे महात्मा सन्तराम की सराय में आकर बैठे हैं? वह तीन दिन से बिल्कुल निराहार हैं और पत्थर

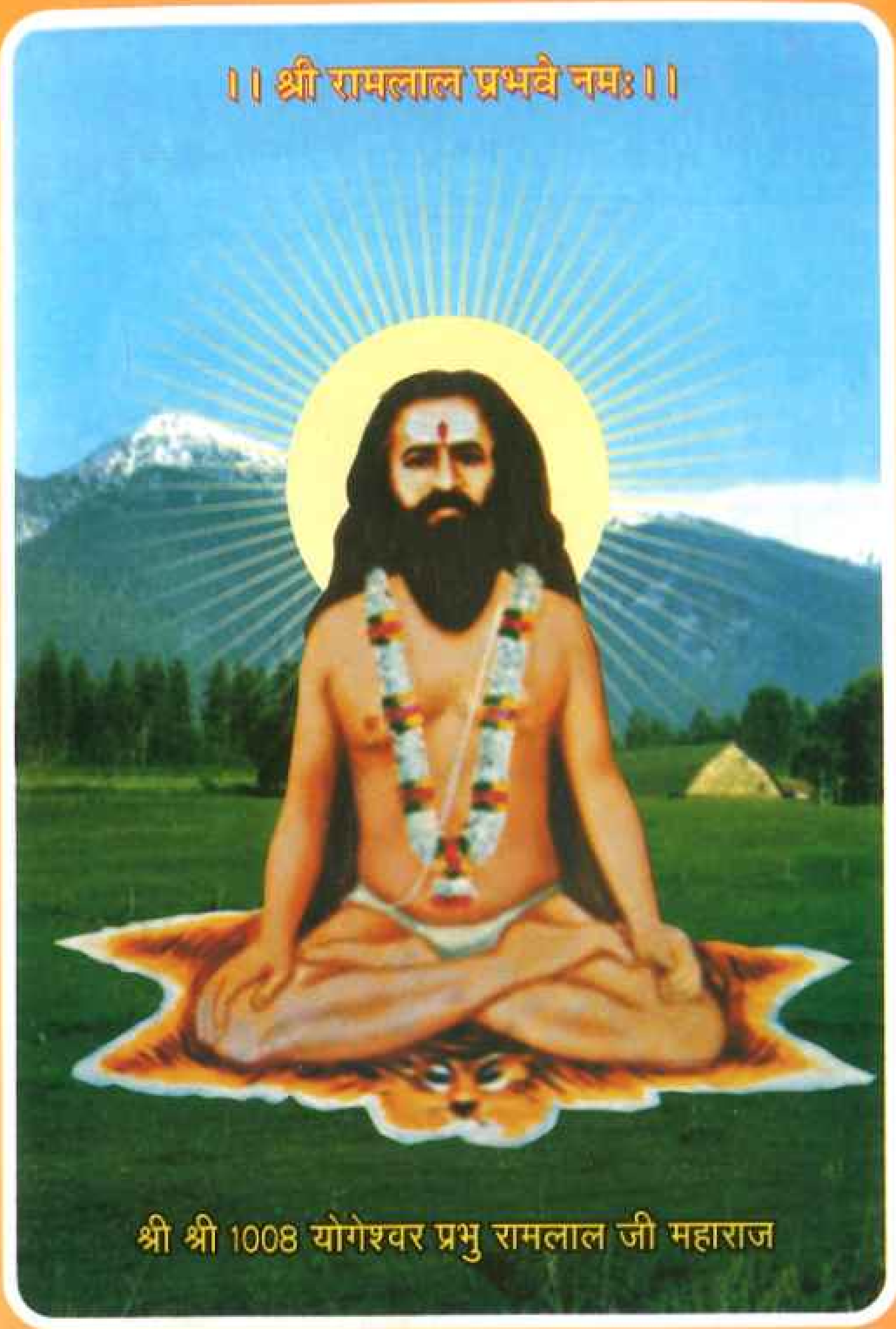

श्री श्री 1008 योगेश्वर प्रभु रामलाल जी महाराज

की मूर्ति की तरह से बैठे हैं, न हिले हैं न डुले हैं? चलिए आपको भी उनके दर्शन करा लावें। श्री गुरुदेव जी ने उत्तर दिया, भाई! हमें रहने दो, तुम्हीं दर्शन कर आओ। जब तीन रात्रि से बैठे हैं तो अच्छे तो हैं ही। किन्तु लोगों ने बड़ी भारी हठ की। लोगों के मन में यह भावना थी कि उस महात्मा को देखकर श्री गुरुदेव जी आश्चर्य चकित हो जावेंगे और कहेंगे कि हाँ, यह तो कोई अवश्य सिद्ध योगिराज हैं। किन्तु बात कुछ और ही थी। श्री प्रभुजी उन लोगों के आग्रह करने पर सन्तराम की सराय में गये। जहाँ वह महात्मा समाधि लगाकर बैठे हुए थे, धीरे–से उनके पीछे जाकर खड़े हो गये। लोगों को यह आश्चर्य हुआ कि और लोग सामने खड़े हैं और यह पीठ के पीछे खड़े हैं। थोड़ी ही देर में लोगों ने देखा कि महात्मा के शरीर में एक कम्पन पैदा हुआ। उस कम्पन के साथ उनके प्राण–कोष ब्रह्माण्ड से नीचे आ गये। महात्मा सचेत होकर जाग उठे और बड़ी तीव्रता के साथ खड़े होकर परम करुणार्णव मेरे श्री गुरुदेव जी के चरणारविन्द में गिर पड़े और चरणों से लिपट गये। महात्मा इतने रोये कि प्रभुजी के बहुत समझाने पर भी आँसू बन्द नहीं होते थे। श्री प्रभुजी ने उनको दोनों हाथों से उठाकर कण्ठ से लगा लिया और सिर पर हाथ रख आशीर्वाद देते हुए कहा–बेटा! रोते क्यों हो? मैंने ही तुम्को शतपथ से बुलाया है तुम्हारी समाधि अपूर्ण थी, आज से वह पूर्ण हो जायेगी और तुम्हारी खेचरी मुद्रा सिद्ध हो जायेगी। आकाश–गमन आदि सब ठीक हो जायेगा। महात्मा ने बड़ी कठिनता से श्री प्रभुजी से हाथ जोड़ कर प्रार्थना की। प्रभो! हे सर्वशान्तिमान्! मेरे रोने का केवल एक ही कारण है। मैं आपका मन्द बालक हूँ। तीन दिन तीन रात मेरी कठोर परीक्षा के बाद आपने मुझे दर्शन दिये हैं। मैं तड़पता रहा चरणारविन्दों के दर्शन के लिए, किन्तु आपके चरणारविन्द में बहुत से स्त्री पुरुषों का जमघट होने के कारण मैं नहीं आ सका और आप दर्शन देने के लिए नहीं आये। आज मेरा यह शुभ दिन है। पता नहीं मेरे कौन से पुण्य प्रारब्ध से प्राणिमात्र से अन्तर्द्रष्टा श्री प्रभुजी! आपने मुझे आकर कृतार्थ किया है। श्री प्रभुजी ने उस महात्मा को कुछ समय अपने पास रखकर हिमालय भेज दिया। जो लोग श्री प्रभुजी के साथ सन्तराम की सराय में गये थे, उनके आश्चर्य का तो कोई ठिकाना ही नहीं रहा। वह लोग भली प्रकार जान गये, इस विप्र वेष में छिपे यह अवश्य कोई सर्वसमर्थ महापुरुष हैं। यह पहली घटना थी जिससे कुछ सर्व साधारण लोग मेरे गुरुदेव के स्वरूप को कुछ–कुछ समझने लगे। यहाँ से ही शक्तिपात और सब प्रकार के योग प्रचार का कार्य आरम्भ हुआ। मेरे गुरुदेव ने इस बीच में क्या–क्या कार्य किया, वह शनैः–शनैः इस पत्र में प्रकाशित होता रहेगा जिससे पाठकगण समझते रहें कि सद्‌गुरुदेव कौन होता है और उनके कार्य किस प्रकार के हुआ करते हैं।

धारणा : शक्ति प्राप्ति का साधन

योग–योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

हमने कभी किसी लेखों में यह भली प्रकार से समझा दिया है कि शक्ति–विहीन व्यक्ति कुछ भी नहीं है। हमारे शास्त्रों का भी कथन है।

''नायमात्मा बलहीनेन लभ्यो''

अर्थात् बलहीन मनुष्य को आत्म–पद की प्राप्ति स्वप्न में भी सम्भव नहीं है। जो प्राणी शक्तिहीन है वह लोक व परलोक के सुख को किसी प्रकार भी प्राप्त नहीं कर सकता। उसका जीवन केवल इस प्रकार का है जिस प्रकार से वर्षा काल में अनेक प्रकार के कीट–पतंगे आदि जन्म लेकर मर जाया करते हैं। मनुष्य जब से जन्म ग्रहण करता है तब से उसके मन में शक्ति–प्राप्ति की धुनि सवार रहती है। किन्तु ''मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना'' के नियमानुसार साधन में मनुष्य अपनी मति के अनुसार प्रवृत्त होता है। इसलिए वह जिस प्रकार की साधना करता है उसी प्रकार की शक्ति का अनुभव कर अपने आपको आह्लादित कर लेता है किन्तु उसका वह आह्लाद बहुत थोड़े समय के लिए होता है जिस प्रकार से समुद्र की मछली को कहीं तपी हुई बालुका में डाल दिया जाये तो वह इस बालुका की गर्मी को पाकर तड़प जाया करती है और यदि उसको कोई छोटा सा भी जलाशय मिल जाता है तो उसे पाकर उसे शान्ति मिलती है किन्तु यह शांति भी उसके लिए अस्थाई रहती है। जब तक वह अपने घर समुद्र को प्राप्त नहीं हो जाती तब तक उसका दुःख तड़पना किसी भी प्रकार से कम नहीं हो सकता। इसी प्रकार यह जीवात्मा शक्ति के भण्डार परमात्मा का अंश है। अतः जब तक यह उन्हीं को प्राप्त नहीं हो जाता तब तक छोटी–मोटी शक्तियों को पाकर इसको शान्ति उपलब्ध नहीं हो सकती और जिसको शान्ति ही नहीं मिली, उसको सुख कहां से आयेगा। इसलिए योगियों ने अपने तप के आधार पर उच्चतम् शक्ति प्राप्त करने के उपायों का अन्वेषण किया जिनको अपनाते हुए वे कभी भी दीनता को प्राप्त नहीं होते। हमारे शरीर में सभी प्रकार की शक्तियों की उत्पत्ति का केन्द्र मन है। मन की ज्योतियों को भी महा ज्योति कहा गया है और वेद मन्त्रों में उसको शिव

संकल्प वाला होने की प्रार्थना की गई है।

वेद भगवान ने कहा है कि हमारा मन जैसे जागता हुआ दूर–दूर भ्रमण करता है, और सोता हुआ भी इस प्रकार क्रियाशील बना रहा करता है। उसमें शुभ संकल्पों का वास हो जिससे वह हमारे उत्थान का कारण बने। हमारे पूर्वजों का कथन है–

मनएव मनुष्याणाम्,
कारणं बन्धमोक्षयोः।

अर्थात् बन्ध और मुक्ति का कारण मन है इसलिए सर्वप्रथम मन की चंचलता को रोक कर शक्ति संचय करने के लिए उसका संयम में ले आना बहुत ही आवश्यक है। भगवान पतंजलि देव ने ''योग दर्शन'' में अष्टांग योग का वर्णन किया है, यह सारे के सारे अंग यद्यपि मन पर कण्ट्रोल करने के लिए अचूक साधन हैं। किन्तु फिर भी सब प्रकार की साधना करते हुए अष्टांग योग के अन्दर धारणा, ध्यान और समाधि मनोनिग्रह करने के तीन प्रमुख साधनों का उल्लेख किया है। जब तक मन किसी धारणा के द्वारा अन्तर्मुखी नहीं होता तब तक इसके अन्दर शक्तियों का उदय नहीं हो सकता। किसी महा वृक्ष को छेदन करने के लिए पहले इस प्रकार के शस्त्र की जरूरत है जो तेजधार वाला हो और जो उसे काट सके इसलिए परम श्रेय लाभ करने के लिए और अपने अन्दर दिव्य शक्तियों को संग्रहीत करने के लिए प्रथम मन को ही वश में लेना बहुत आवश्यक है। इसकी पहली साधना धारणा से आरम्भ होती है।

धारणा

धारणा का अभ्यासी मनुष्य बाह्य जगत् में प्रवेश करने की योग्यता को धारण करता है। धारणा क्या है? इसके विषय में भगवान् पतंजलि देव अपने सूत्र में इस प्रकार निर्देश करते हैं–

देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।

अर्थात् किसी लक्ष्य स्थान में चित्त को इकट्ठा करना धारणा कहलाती है। यह धारणा ही योग का सर्व प्रथम सोपान है। यहां से ही मनुष्य का सर्वार्थक मन एकाग्र होना आरम्भ होता है। धारणा कहां करनी चाहिए इस विषय में शास्त्रों के अनेक मत हैं किन्तु व्यास देव जी योग–दर्शन के भाष्यकार ने धारणा के इस प्रकार बतलाये हैं–

नाभिचक्रे, हृदय पुण्डरीके, मूर्ध्नि ज्योतिषि, नासिकाऽग्रे, जिह्वाऽग्रे, इत्येवमादिषु देशेषु, वाह्ये वा विषये, चित्तस्य वृत्ति मात्रेण बन्ध इति धारणा।

अर्थात् नाभि चक्र, हृदय, कमल, भूर्ध्व ज्योति, नासिका अग्र, जिह्वा अग्र इत्यादि स्थानों पर चित्त की वृत्ति मात्र को एकाग्र करना धारणा कहलाती है। वृत्ति मात्र कहने का अभिप्राय यह है कि इनको हम अपने मन की वृत्ति कल्पनात्मक रूप से चिन्तन करें, जिस प्रकार से आँख रूप

को प्रत्यक्ष देख लेती है और मन उस रूप की भावना किया करता है। देखे सुने हुए विषय को मन का भावना रूप में चिंतन करना ही वृत्ति बन्ध है। इसका अभिप्राय इस प्रकार समझ लेना चाहिए, जैसे हम हृदय कमल में भगवान् शिव के स्वरूप पर धारणा करना आरम्भ करें और कल्पना से उनके स्वरूप को हम हृदय में बैठा हुआ देखने लगें तो यही हृदय कमल की धारणा है। बार–बार कल्पना से भगवान् शिव, श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्री विष्णु या अन्य किसी भी इष्टदेव के स्वरूप का हृदय कमल में चिन्तन करना यह हृतपुण्डरीक में होने वाली धारणा है इसी प्रकार से मूर्ध्वा ज्योति, नासिका अग्र, जिह्वाग्र, नाभि चक्र आदि में धारणा की जाती है। धारणा करने वाले व्यक्ति को चाहिए कि वह फल की इच्छा को छोड़ करके कर्म को करता रहे। किसी भी काम में मनुष्य जल्दी परिणाम को प्राप्त नहीं कर सकता। भगवान् पतंजलिदेव का आदेश है–

स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढ़भूमिः।

अर्थात् किसी भी अभ्यास को हम करना शुरू करें तो उसके परिणाम की प्रतीक्षा के लिए उसका वर्षों तक लगातार करते रहना बहुत आवश्यक है। यह नहीं कि हम एक–दो दिन करके ही उसके परिणाम पर नजर डालने लगें। काफी लम्बे समय तक उस अभ्यास को करना चाहिए और लगातार करना चाहिए अर्थात् इस नियम में कोई विघ्न नहीं आने पावे। आज कर लिया कल फिर छूट गया, फिर दो चार रोज करके फिर कुछ समय के लिए छूट गया–इस प्रकार का अभ्यास सफलता के उच्चतम स्तर पर नहीं ले जा सकता। इसके साथ–साथ एक बात यह भी परमावश्यक है कि हम श्री गुरुदेव के वचन पर विश्वास करके उस अभ्यास को करें जिसमें हमारी श्रद्धा परिपूर्ण रूपेण हो, हमने किसी मन्त्र का जाप शुरू किया और उसमें हमारी आस्था न हुई तो उसका भी परिणाम जल्दी श्रेयस्कर नहीं हो सकता। वैसे शास्त्रीय नियम के अनुसार **''अकर्णात् कर्णम् श्रेयः''** न करने से कुछ करना ही अच्छा है, इस बात को विचार में रखते हुए जो कुछ भी किया जाए, कुछ न कुछ भले के लिए तो होता ही है, किन्तु यदि हम उसके उत्तम और अन्तिम निष्कर्ष को देखना चाहते हैं तो उपरोक्त तीनों नियमों का पालन करना हमारे लिए बहुत ही आवश्यक है। इसलिए धारणा को भी परिपक्व करने के लिए हमें कम–से–कम तीन साल तक एक विषय पर ही परिपक्व मन लगाना चाहिए। तीन साल तक यदि मन्दाधिकारी भी उपरोक्त सूत्र के अनुसार धारणा का अभ्यास करेगा तो उसका भी मनोबल अवश्य बढ़ेगा ही बढ़ेगा। धारणा के अभ्यास से मन में विचार करने की उच्च स्तर की योग्यता प्रकट हो जाती है और वह एकाग्रता की ओर चलने लगता है। भगवान् पतंजलि देव ने योग–दर्शन में कहा है–

धारणा सु योग्यता मनसः।

अर्थात् धारणा करने पर मन की योग्यता बढ़ती है। मन में बल का विकास होता है, और वह सब कुछ करने की ताकत वाला बन जाता है। जो व्यक्ति दो या तीन साल तक लगातार प्रातः व सायंकाल 3–3 घण्टे अपने ध्येय विषय को धारणा करके उसको वृत्ति निरोध से एकाग्रित करना चाहता है उसका ऐसा अनवरत अभ्यास करने पर अवश्य ही वह विषय उसके मन में प्रगट होने लगता है। मन को एकाग्र करने के कुछ इस प्रकार के नियम हैं कि जिनके पालन करने से हर मनुष्य का मन एकाग्र हो ही जाता है। यदि वह किसी अच्छे कण्ट्रोलर अर्थात् अच्छे नियन्त्रक गुरुदेव की आज्ञा में बंधकर अपने अभ्यास को नियमानुसार करता है तो इस प्रकार से लगातार किया हुआ यह धारणा अभ्यास स्वतः ही ध्यान के रूप में बदल जाया करता है।

संसार

अधिकांश व्यक्ति संसार को दुःख और अशांति का घर समझते हैं। बहुत थोड़े व्यक्ति संसार को सुख और सौन्दर्य का धाम मानते हैं वस्तुतः संसार में सुख और दुःख दोनों होते हैं परंतु दुःख की अपेक्षा सुख अधिक होता है। संसार का सुख या दुःखपूर्ण होना मनुष्य की अपनी मनःअवस्था पर निर्भर होता है, अतः संसार के वास्तविक स्वरूप को भली–भांति जान और समझकर अपने को संसार के योग्य और संसार को अपने योग्य बनाना कल्याणप्रद होता है।

लोग संसार की निन्दा करते हैं। संसार की निन्दा करने की अपेक्षा उसका रहस्य जानना उत्तम है। लोग संसार की उपेक्षा करते हैं। उपेक्षा करने से उसका अध्ययन करना श्रेयस्कर है। लोग संसार का दुरुपयोग करते हैं। दुरुपयोग करने की अपेक्षा उसका सदुपयोग करना कल्याणकारी है।

— श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक

सम्पादकीय

परम गुरुदेव श्री प्रभु रामलाल जी महाराज का पावन प्राकट्य दिवस

— योगाचार्य डॉ. दासलाल

ईश्वर सर्वव्यापक और अनादि है। वह सृष्टि का सर्वप्रथम गुरु है। योग दर्शन में पतञ्जलिदेव जी महाराज ने **'स: पूर्वेषामपि गुरुः कालेनान वच्छेदात्'** कहकर ईश्वर को सृष्टि का प्रथम गुरु कहा है। तीनों काल में विद्यमान रहने के कारण उनकी सत्ता अविच्छिन्न रूप से विद्यमान रहती है। वही ईश्वर समय-समय पर सगुण रूप में आकर प्रकट होते हैं और भक्तों की रक्षा तथा दुष्टों का संहार करते हैं—जैसा कि भगवान ने गीता के चौथे अध्याय में घोषणा की है। योग रूपी धर्म की स्थापना समय-समय पर प्रकट होकर करते रहते हैं। ईश्वर की भांति महायोगियों का चरित्र भी अलौकिक होता है उनके चरित्र व इतिहास को जानना असंभव होता है। ऐसे योगी किसी भी स्थान पर, किसी भी समय प्रकट होकर अपना अभीष्ट कार्य किया करते हैं। उनका जन्म और कर्म मानुषी बुद्धि के द्वारा नहीं समझा जा सकता। वे ईश्वर के तुल्य ही होते हैं ऐसे ही एक महायोगी हुए हैं जो सृष्टि के अन्त तक हिमालय में अजर-अमर रहकर वास करते हैं तथा योग विधि से काय-निर्माण कर पृथ्वी पर आते रहते हैं जिनका परम पावन नाम महाप्रभु रामलाल है। वे एक ही समय में अनेक स्थानों पर काय-निर्माण से शरीर बना कर योग विद्या के प्रचार-प्रसार के लिए प्रकट होते रहते हैं। ऐसे योगियों के काय-निर्माण से कार्य करने की बात उपनिषदों में वर्णित है।

''अचिन्त्य शक्तिमान योगी नाना रूपाणिधार येत्।'' अचिन्त्य शक्तियों से सम्पन्न योगी नाना रूपों तथा नाना नामों से रहकर अपना अभीष्ट कार्य करते रहते हैं। ऐसे योगी अपने भक्तों के अविद्यादि क्लेश रूप दुःख द्वन्द्वों को मिटा देते हैं। योग ध्यान की विधि द्वारा भक्तों को पूर्णतया योग मार्ग में लगाने के लिए तीव्र शक्तिपात कर कुण्डलिनी शक्ति को जागृत कर योग के गूढ़ रहस्यों को प्रकट कर उच्च भूमिकाओं में प्रवेश करा देते हैं। सम्प्रज्ञात तथा असम्प्रज्ञात समाधि का बोध करा देते हैं।

महाप्रभु रामलाल जी महाराज कल्पान्त जीवी अजर अमर सिद्ध हैं। योग पृथ्वी से लुप्त प्राय: होता देखकर बीसवीं शताब्दी में योग विद्या के अनेक रूपों से योग का प्रचार किया है। वे योग के साक्षात् स्वरूप हैं। उनके श्वास-श्वास में योग की विभूतियाँ प्रकट होती हैं। वे सर्वसमर्थ हैं। **''कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुम्''** की शक्ति वाले हैं। अर्थात् अपनी इच्छा से ही किसी

वस्तु का निर्माण कर लें क्षण में किसी को सिद्ध बना दें तथा उनके विपरीत चलने पर नीचे गिरा दें यह सब सामर्थ्य उनमें विद्यमान है। सिद्धों की इच्छा के अनुरूप ही प्रकृति चलती है। पातञ्जल दर्शन में योग विभूतियों पर भाष्य लिखते हुए भगवान् व्यास देव जी लिखते हैं कि योग सिद्ध योगियों की इच्छा के अनुसार प्रकृति उसी प्रकार से चलती है जिस प्रकार से सद्यः प्रसूत गौ अपने बछड़े के पीछे–पीछे चला करती है। श्री महाप्रभु जी ने कुछ दिन श्री सिद्ध गुफा में रहकर इस भूमि को पवित्र किया और उसे योग का हृदय बना कर गये। इसकी रज योग विभूतियों से ओत–प्रोत है। सिद्ध पुरुष ही ऐसे योगियों के विषय में जान पाते हैं साधारण मनुष्य नहीं। उनके शिष्यों की लम्बी शृंखला में देवरहा बाबा प्रभृति अनेक सिद्ध हैं जो हिमालय की कन्दराओं में अजर अमर हैं। श्री योगी हरीहरानन्द जी महाराज को श्री प्रभु जी ने एक क्षण में तत्त्व विजयी सिद्ध बना दिया जो आज भी शीशगिरी पहाड़ी पर समाधिस्थ हैं, ऐसा हमारे गुरुदेव योगीराज श्री चन्द्रमोहन जी हमें अपने श्री मुख से बतलाया करते थे।

श्री सिद्ध गुफा से ही अनुप्राणित होकर सैंकड़ों योग की शाखायें देश–विदेश में चल रही हैं। हमारे गुरुदेव योगिराज जी ने अपने शिष्यों के मन में श्री प्रभु जी की अप्रतिम योग प्रभाव को स्थापित किया है इसी कारण से उनके शिष्य प्रभुजी को सदाशिव स्वरूप मान कर उनकी पूजा व ध्यान करते हैं तथा सफल मनोरथ होते हैं।

आपका अवतरण पंजाब प्रान्त के अमृतसर शहर में स्वनाम धन्य ज्योतिर्विद पं. गण्डाराम जी के घर में सन् 1888 में श्री राम नवमी के पावन पर्व में हुआ। श्री माता जी का नाम भागवन्ती देवी हुआ। आप के जन्म कुण्डली को देखकर ही आप के महायोगी होने का प्रमाण मिल गया था। आप के पूर्वज भी बहुत शक्ति सम्पन्न महापुरुष हो चुके हैं जो अपने संकल्प मात्र से मृत बालक को जीवित कर देना, मन्त्रोच्चारण से ही अग्नि प्रज्वलित कर देना, वर्षा करा देना आदि अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न थे। इसी दिव्य कुल में प्रभु जी का अवतरण हुआ था। शैशवावस्था में ही आपके कार्य बड़े अलौकिक थे। चौदह वर्ष की आयु में ही विद्याध्ययन के बहाने से घर से निकल पड़े थे। सर्वप्रथम आप कुरुक्षेत्र पहुँचे। विद्याध्ययन के समय ही आपके कई चमत्कार विद्यार्थियों ने देखे।

एक दिन दोपहर विश्राम के समय आप विश्राम कर रहे थे तभी एक नाग इनके सिर पर छाया किये खड़ा था। कुछ देर बाद स्वतः ही गायब हो गया। वहाँ से आप काशी जी चले गये। उस समय में बहुत से तांत्रिक मान्त्रिकों से आप की टक्कर हुई। आपने सभी की शक्तियों को परास्त किया और कुरीतियों तथा व्यभिचार के केन्द्रों को नष्ट किया। सभी आप की यौगिक शक्तियों के सामने नतमस्तक हुए। कुछ वर्षों बाद आप श्री धाम वृन्दावन की ओर चले आये तथा घूमते–घूमते बरहन गाँव के लोगों पर कृपा बरसाते हुए सवाई गाँव पहुँच गये। यहाँ प्यारे लाल आदि आप के परम भक्त बन गये। आप के मुख से निकली वाणी अक्षरशः सत्य होती थी। आपके दिव्य सानिध्य को पाकर सभी कृतकृत्य हो गये। आप के निर्विघ्न समाधि की

स्थिति के लिए उचित जगह के लिए ग्राम वासियों ने गुफा बना दी। वहाँ कुछ वर्ष श्री प्रभुजी रहे तत्पश्चात् एक दिन चुपके से प्रातः काल ही गुफा के बन्द द्वार से अणिमा सिद्धि से निकल कर आकाश मार्ग से हिमालय की ओर चले गये। वहाँ नेपाल में अपने गुरुदेव श्री महाप्रभु सदाशिव के निकट कई वर्ष रहने के बाद उनकी आज्ञा से ही योग विद्या के प्रसार के लिए पुनः मैदानों में आ गये। अपने संस्कारी भक्तों को योग मार्ग का उपदेश दिया। अपने भक्तों के आध्यात्मिक उन्नति के लिए जीवन तत्त्व की साधना के उपयोगी क्रियाओं का अन्वेषण करके भक्तों के मध्य प्रकाशित किया। अमर तत्त्व, फल तत्त्व आदि विशेष साधनों का प्रचार किया। इन क्रियाओं द्वारा जठराग्नि दीप्ति के साथ–साथ कुण्डलिनी जागरण के लिए शक्ति संचार का प्राचीन यौगिक आर्ष परम्परा को अक्षुण्ण बनाया। आपने कई सिद्धयोगी बनाये जिसमें ब्र. गोपालानन्द जी महाराज, श्री योगी मुल्खराज जी महाराज, गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज, श्री योगी नृसिंह मूर्ति जी, माता द्रोपदी देवी एवं ऋषिदेवी जी प्रमुख हुये। इन महान योगियों ने अध्यात्म योग व ध्यान योग का उपदेश अपने शिष्यों को दिया। सबसे अधिक प्रचार करने वालों में गुरुदेव योगिराज श्री चन्द्रमोहन श्री महाराज का नाम सर्वोपरि आता है। आप सच्चे अर्थों में श्रोत्रीय एवं ब्रह्मनिष्ठ योगी हुए जिनके लाखों शिष्य ध्यानयोग में दीक्षित होकर आत्म कल्याण के पथ पर अग्रसर हैं। सदेह न होने पर आज भी अपने साधकों का अज्ञान तिमिर दूर कर रहे हैं। श्री प्रभु जी की परम्परा के साधक भ्रमित नहीं रहते हैं। योग के वास्तविक स्वरूप को जानने वाले होते हैं। योग में तर्क व विवाद का कोई स्थान नहीं है। ध्यान जन्य ऋतम्भरा प्रज्ञा व विवेक ख्याति ही जन्म मरण के चक्र को छुड़ा देने वाली होती हैं। 'सिद्धयोग' की परम्परा में यद्यपि सिद्ध गुरुदेव सब कुछ स्वयं करने वाले होते हैं तथापि निमित्त मात्र से क्रिया योग की साधना का निरन्तर अभ्यास करते रहने की आज्ञा हमारे सद्गुरुदेव योगिराज जी की आज्ञा रही है। श्री प्रभु जी अपने भक्तों के लिए कल्पवृक्ष व कामधेनु के समान हैं सभी इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हैं। साधक को चाहिए शुद्ध व निर्मल भाव से साधनारत रहे। श्री प्रभु जी अपने भक्तों के हृदय कमल पर सदा विराजमान रहते हैं। श्री सिद्ध गुफा संवाई धाम में इस वर्ष श्री राम नवमी पर्व योग महामेला के रूप में 3, 4 व 5 अप्रैल को धूमधाम से मनाया जा रहा है। उनके प्राकट्य दिवस के पावन अवसर पर उनके चरण–कमलों में सभी भक्तों का कोटि–कोटि नमन है।

सच्चा बुद्धिमान् तो वह है, जो इस रहस्य को समझ लेता है और सारे जगत् की उत्पत्ति का कारण तथा जगत् की सारी प्रवृत्तियों का हेतु एकमात्र श्री भगवान् को मानकर, भावपूर्ण हृदय से भगवान् को भजता है।

''ॐ श्री रामलाल प्रभवे नमः''

श्रीमद्भागवत में योग-परिचर्या

—डॉ. विजय सिंह

प्रलय काल की विभीषिका में नौकारूढ़, महाराज सत्यव्रत ने मत्स्य प्रेरणा से मत्स्यावतार भगवान की तात्विक स्तुति गान करते हुए आत्मज्ञान प्राप्त करने हेतु प्रार्थना किया।

भगवान का वह सम्पूर्ण उपदेश मत्स्यपुराण में विस्तार से वर्णित है। ज्ञान, भक्ति, तथा योग का परिपूर्ण उल्लेख किया गया है—

पुराणसंहितां दिव्यां सांख्ययोगक्रियावतीम।

सत्यव्रतस्य राजर्षेरात्मगुह्यशेषतः॥55॥ (अ. 24 स्क. 8)

सत्यव्रत ऋषियों के साथ नाव में बैठे हुये संदेह रहित होकर भगवान के द्वारा उपदिष्ट सनातन ब्रह्म तत्व का उपदेश श्रवण किया। जब प्रलय का अन्त हुआ, ब्रह्मा जी जगे तब भगवान ने हयग्रीव असुर को मारकर उससे वेद छीनकर ब्रह्माजी को दे दिये। भगवान की कृपा से राजा सत्यव्रत ज्ञान और विज्ञान से संयुक्त होकर इस कल्प में वैवस्वत मनु हुये।

सतु सत्यव्रतो राजा ज्ञानविज्ञानसंयुतः।

विष्णोः प्रसादात् कल्पेऽस्मिन्नासीद् वैवस्वतो मनुः॥

(श्लो. 58 अ. 24 स्क. 8)

इस प्रकार आठवें स्कन्ध में वर्णित योग विवरण विश्राम पाया है। आगे वर्णित स्कन्धों में राजवंशों के विवरण के साथ चन्द्रवंशी एवं सूर्यवंशी राजाओं के जीवन परिचय मिलते हैं। सूर्यवंश में अवतरित मर्यादापुरुषोत्तम राम तथा पूर्णावतार भगवान श्रीकृष्ण की अकल्पनीय योग ऐश्वर्यों की कथा विस्तार से गायी गई है। आगे के लेखों में उनका यथोचित विवेचनात्मक विवरण लिखने की चेष्टा होगी।

ईश्वर साकार है या निराकार यह प्रश्न वैदिक काल से चला आ रहा है। ऋषियों, सिद्धों, अवतारों ने युग सापेक्ष उचित समाधान किया है। एक धारा मन, बुद्धि की है वहीं एक धारा भाववृत्ति की हृदय से प्रारम्भ होती है। भागवत् पुराण में भक्तियोग की प्रधानता बताते हुए भी अन्ततोगत्वा उस अवर्णनीय, अव्यक्त, ब्रह्म की ही ओर संकेत किया गया है। सारे भागवत् पुराण के श्लोकों का निचोड़ चतुःश्लोकी भागवत् के रूप में बताया गया है। वह चारों श्लोक से ईश्वर के साकार और निराकार जैसे प्रश्न का स्वयं समाधान हो जाता है, देखें—

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत सदसत् परम्।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम्।।1।।

ऋतेऽर्थ यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि।
तद्विद्यादात्मनो मायां यथाऽऽभासो यथा तमः।।2।।

यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावच्चेष्वनु।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि यथा तेषु न तेष्वहम्।।3।।

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनाऽऽत्मनः।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा।।4।।

(अ. 9 स्क. 2 श्लोक 32–35)

अर्थात्–

सृष्टि के पूर्व केवल मैं–ही–मैं था। मेरे अतिरिक्त न स्थूल था न सूक्ष्म और न तो दोनों का कारण अज्ञान। जहाँ यह सृष्टि नहीं है, वहाँ मैं ही विद्यमान हूँ, इस सृष्टि के रूप में जो प्रतीति है वह भी मैं हूँ और जो कुछ शेष है, वह भी मैं हूँ।

यथार्थतः जो कुछ अनिर्वचनीय वस्तु न होने पर भी मेरे अतिरिक्त मिथ्या ही प्रतीत हो रही है, अथवा विद्यमान होने पर भी आकाश–मण्डल के नक्षत्रों में राहु की भांति जो मेरी प्रतीति नहीं होती, इसे ही मेरी माया समझना चाहिये।

प्राणियों के पंचभूतात्मक शरीरों में आकाशादि पंचमहाभूत उन शरीरों के कार्यरूप से निर्मित होने के कारण प्रवेश करते भी हैं और पहले से उन स्थानों एवं रूपों में कारणरूप से विद्यमान रहने के कारण प्रवेश नहीं भी करते हैं, वैसे ही प्राणियों के शरीर की दृष्टि से मैं उनमें आत्मा के रूप में प्रवेश किये हुए हूँ और आत्मदृष्टि से मेरे अतिरिक्त और कुछ न होने के कारण उनमें प्रविष्ट नहीं भी हूँ।

यह ब्रह्म नहीं, यह ब्रह्म नहीं–इस प्रकार निषेध पद्धति से और यह ब्रह्म है, यह ब्रह्म है– इस अन्वय की पद्धति से यही सिद्ध होता है कि सर्वातीत, सर्वस्वरूप भगवान ही सर्वदा और सर्वत्र स्थित हैं। वे ही यथार्थ तत्व हैं। जो आत्मा अथवा परमात्मा को जानना चाहते हैं, उन्हें केवल इतना ही जानने की आवश्यकता है।

उपरोक्त कथन भगवान के तात्विक स्वरूप का वर्णन है उसे बुद्धि, विज्ञान से भी परे बताया गया है। गीता जी के तेरहवें अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण, अर्जुन को बताते हैं कि वह ब्रह्म न सत है न असत है, दूर है और अत्यन्त निकट है। अतिसूक्ष्म और जानने में आने योग्य नहीं

हैं। वही अविभक्त विभक्त भी है सबमें स्थित होते हुए किसी में स्थित नहीं है। वह सब दिशाओं में हाथ–पैर वाला, सब ओर आँख–मुँह वाला है–

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते।
अनादिमतपरं ब्रह्म न सत्तान्नासदुच्यते।।12।।

सर्वतः पाणिपादं, तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वत् श्रुतिमल्लोके सर्वभावृत्य तिष्ठति।।13।।

वहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्ति के चतत्।।14।।

प्रथम स्कन्ध में ''सत्यं परम् धिमही'' कहकर सत्य ही परमात्मा है हमें उसकी ही धारणा करनी चाहिए। अन्य सात स्कन्धों में सृष्टि प्रक्रिया, काल प्रक्रिया एवं भगवान के नाना अवतार लीलाओं के साथ ईश्वरानुरागी भक्त, साधक, योगियों, सिद्धों, असुरों–दैत्यों की कथा कही गयी।

प्रारम्भ में ही जब सौनक जी ने सूत जी से प्रश्न किया–महात्मन हमें कोई ऐसा शाश्वत् साधन बताइये, जो सबसे अधिक कल्याणकारी पवित्रोपम हो तथा जो भगवान कृष्ण की प्राप्ति करा दे–

श्रेयसां यद्भवेच्छ्रेयः पावनानां च पावनम्।

कृष्ण प्राप्तिकरं शश्वत्साधनं तद्वदाधुना।।6।।

चिन्तामणि केवल लौकिक सुख दे सकती है और कल्प वृक्ष स्वर्गीय सम्पत्ति दे सकता है। परन्तु गुरुदेव प्रसन्न होकर भगवान का योगी दुर्लभ नित्य वैकुण्ठधाम दे देते हैं–

चिन्तामणिर्लोकसुखं सुरद्रुः स्वर्गसम्पदम्।
प्रयच्छति गुरुः प्रीतो वैकुण्ठं योगी दुर्लभम्।।

निष्कर्ष यह कि सर्व साधनों का प्रतिफल सदगुरु की प्रसन्नता ही है। उनके प्रसन्न होने पर भुक्ति–मुक्ति भगवान का दर्शन, तत्व ज्ञान सभी सहज सुलभ होता है।

श्रापग्रस्त महाराज परीक्षित को भगवान शुकदेव जी ने अपने प्रबोधात्मक कृपादृष्टि से संतृप्त कर दिया। वे समाधिगत् हो, प्राणों को ब्रह्माण्ड में लय करके सातवें दिन आरुढ़ हुए। तक्षक जड़ शरीर को भस्म श्राप के कारण कर सका परन्तु गुरुदेव की कृपा से परीक्षित पहले ही आत्म–बोध प्राप्त कर परमात्मा में लीन हो चुके थे।

ॐ श्री रामलाल प्रभवे नमः

– अमरनाथ सक्सेना, शिवपुरी (म. प्र.)

इस लेख को लिखने की प्रेरणा मेरे पूज्य वंदनीय बड़े भ्राता डॉ. विजय सिंह जी द्वारा गुरुदेव द्वारा अपने सद्–शिष्यों पर किये जा रहे चमत्कारिक घटनाक्रमों के प्रकाशन, पूर्व में छपी हुई सिद्ध योग मासिक पत्रिका से प्राप्त हुई है।

दिनांक 11.11.1974 को मेरी स्वयं की शादी होने के लिए मैं स्वयं व रीवा से मेरे बड़े भाई श्री रामनाथ सक्सेना जी अपनी धर्म पत्नी श्रीमती कामिनी सक्सेना व बच्चों के साथ ग्वालियर में हमारी आदरणीय माताजी को लेकर एकत्रित हुए थे। मेरा पदांकन उस समय शिवपुरी म.प्र. शिक्षा विभाग में था। मेरी माताजी बड़े भाई साहब व भाभीजी के साथ रीवा जिसे में जहां वह सिंचाई विभाग में इंजीनियर के पद पर कार्यरत थे, आये हुए थे। ग्वालियर में आते ही माताजी का स्वास्थ्य इतना ज्यादा बिगड़ गया कि सभी डॉक्टर्स के मुताबिक बताया गया कि उम्र के लिहाज से अब इनका अंतिम समय निकट आ गया है।

मेरी शादी जबकि 25 नवम्बर 1974 को होना तय थी, व 16 तारीख को लगुन व फलदान टीका होना था। उधर हमारी माताजी का स्वास्थ्य काफी तेज गति से बिगड़ता जा रहा था, उसी समय हमारी आदरणीय भाभीजी ने हम दोनों भाइयों को यह बताया कि हमारे पापाजी के यानि बड़े भाई साहब की ससुराल पक्ष से परम पूज्यनीय सद्गुरुदेव भगवान, पूज्य स्वामी चंद्रमोहन जी महाराज ग्राम सवाई एत्मादपुर जिला आगरा में रहते हैं। अगर तुम लोग वहां जाओ तो शायद ये संकट की घड़ी टल सकती है। तब मेरे बड़े भाई साहब का मुझे आदेश हुआ, मैं एवं हमारी भाभीजी के बड़े भाई श्री अनिल कंचन जी शाम को ग्वालियर से चलकर लगभग 5–6 बजे करीब सवाई धाम पहुंचे। मैंने उस समय पहली बार श्री सद्गुरुदेव भगवान के दर्शन किये थे। गुरुदेव कहीं योग प्रचार कार्यक्रम में जाने के लिए सफेद रंग की एम्बेसडर कार में सवार हो चुके थे। जब श्री गुरुदेव भगवान ने देखा कि कोई दो लड़के (उस समय मेरी उम्र 24 वर्ष की थी) आश्रम में आये हुए हैं तो गुरुदेव कार से उतरकर गुरुनिवास के सामने रखी आराम कुर्सी पर आकर विराजमान हो गये। मैं गुरुदेव भगवान के चरणों में सिर रखकर रोने लगा, गुरुजी ने मुझे उठाया और पूछा कि लल्ला क्या बात है? मैंने सब वाक्या उन्हें ज्यों का त्यों बताया। मैंने कहा कि गुरुदेव माता जी की तबियत इतनी ज्यादा खराब है, बीमारी कुछ भी नहीं है पर ऐसा लगता है कि हम रात में जब तक ग्वालियर घर पहुंचेंगे, पता नहीं वो हमें

मिलेंगी भी या नहीं आप ही जानें। गुरुदेव भगवान ने उसी समय शक्ति–पातित पुष्प प्रसाद देकर हमें आज्ञा प्रदान की कि लल्ला प्रभूजी के आशीर्वाद से तुम्हारे घर में होने वाले सभी मांगलिक कार्य निर्विघ्न होंगे, यह हमारा पूर्ण आशीर्वाद है।

हम लोग रात्रि में लगभग 11.00 बजे तक ग्वालियर वापिस आ गये, माताजी जिन्हें पानी पीना भी संभव नहीं था, वो पुष्प प्रसाद पानी से गुरुदेव की आज्ञा अनुसार खिलाया गया। सबेरे से माताजी पूर्ण स्वस्थ होकर चलने–फिरने लगीं व ऐसा लग ही नहीं रहा था कि हमारी माताजी कल तक इतनी अधिक अस्वस्थ थीं। 25 नवम्बर 1974 को मेरी शादी के उपरान्त मैं व मेरे बड़े भाई और भाभीजी जब 02 दिसम्बर 1974 को अपने–अपने हैड क्वाटर अर्थात् मैं शिवपुरी व भाई साहब रीवा को जा रहे थे, माताजी की जीवन ज्योति प्रभूजी के चरण कमलों में समाहित हो गई। इस प्रकार से प्रथम दर्शन में परम समर्थ सद्गुरुदेव भगवान ने हमारी पूज्यनीय माताजी को जीवनदान देकर अपनी शक्तियों की अनुभूति करा दी।

इसी प्रकार गुरुदेव भगवान की कृपाएँ निरन्तर अपने भक्तों पर आज भी पूर्णरूपेण बरस रही हैं। मैं संक्षेप में श्री त्रिलोकीनाथ की कृपा का एक संक्षिप्त उल्लेख यहां और कर देना उचित समझता हूँ कि गुरुदेव भगवान के चमत्कार आज भी निरन्तर दिन दूने और रात चौगुने अपने कृपा पात्र शिष्यों पर बरस रहे हैं।

हमारे यहां ग्वालियर में मेरे बड़े बेटे संकल्प की बहू अंशू के दिनांक 14 सितम्बर 2010 को बेटा पैदा हुआ था जिसके दोनों पंजे बिल्कुल तिरछे हुए थे जिससे हम लोग काफी चिन्तित थे, व हम अपने ग्रान्ड सन (पौत्र) होने की कोई खुशियां नहीं मना सके। लगभग 6 माह उस बच्चे का इलाज शासकीय डॉक्टर से कराया गया लेकिन कोई भी लाभ नजर नहीं आया। छः माह बाद सरकारी डॉक्टर ने कहा कि इसका माइनर ऑपरेशन करना पड़ेगा जिसकी स्वीकृति मैंने स्वयं डॉक्टर साहब को देकर ऑपरेशन की तिथि निर्धारित कर ली गई व इसकी सूचना मेरे द्वारा टेलीफोन से अपने बड़े बेटे संकल्प को दे दी। संकल्प जो उस समय एक्सिस बैंक दतिया में ब्रांच मैनेजर के पद पर कार्यरत था, उसने शिवपुरी में अपनी माँ को टेलीफोन द्वारा यह बताया, मेरी पत्नी उस समय सायंकाल 7.00 बजे सद्गुरुदेव भगवान के सामने ध्यान की अवस्था में बैठी हुई थीं। ध्यान में स्वयं प्रभूजी ने उन्हें आदेश दिया कि कृष्णा (ग्रान्ड सन) को यहां शिवपुरी बुला लो व अभी उसे सवाई आश्रम (श्री सिद्ध गुफा) की रज लगाओ, बिना ऑपरेशन के उसके पैर सीधे हो जायेंगे व रामनवमी पर इसे लेकर सवाई धाम में आकर माथा टेकना। श्री त्रिलोकीनाथ के द्वारा दिये गये ध्यान में आदेश का उसी क्षण हम लोगों के द्वारा अक्षरशः पालन किया गया, कृष्णा को उसकी माँ के साथ मैं कार से ग्वालियर से शिवपुरी

लाया व मेरी पत्नी ने ध्यान के तेज आवेग में जो बैठी हुई थीं, आरती का रखा हुआ जल बड़ी बहू अंशु पर व कृष्णा पर खूब डाला, उस छः माह के बच्चे के पैरों में जहां टेढ़ापन था, वहां रज लगाई गई, आज कृष्णा छः वर्ष से ऊपर हो गया है, उसके पैर हमारे त्रिलोकीनाथ के आशीर्वाद से बिल्कुल ठीक हैं व वह बढ़िया दौड़ता, खेलता कूदता है। ऐसे हैं हमारे सद्गुरु देव भगवान के अलौकिक चमत्कार।

आज भी गुरुदेव की प्रत्येक परिवार के प्रत्येक बच्चे पर अलग-अलग इतनी कृपायें पहले से ज्यादा बरस रही हैं।

बोलिये श्री सद्गुरुदेव भगवान की जय,

महाप्रभुजी श्री रामलाल जी महाराज की जय।

आवश्यक-सूचना

सिद्धयोग मासिक के आजीवन सदस्य जो 1991 से 2005 के बीच बने हैं उनकी सदस्यता शुल्क समाप्त हो चुकी है। बहुत से ग्राहकों ने नया शुल्क 1000 रु. कार्यालय में जमा करा दिया है। शेष ग्राहक यदि अप्रैल माह के अन्त तक शुल्क जमा नहीं करते हैं उनकी पत्रिका रोक दी जायेगी।

अतः ग्राहकों से निवेदन है कि शीघ्र ही शुल्क जमा कर अपना नवीनीकरण करा लें।

जय गुरु देव।

सम्पादक
सिद्धयोग मासिक
श्री सिद्ध गुफा संवाई
आगरा

साधक तन और मन का आहार

— डॉ. कमल (लखनऊ)

परम सद्गुरुदेव योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज जब श्री वृन्दावन धाम में एकांतवास में थे, तो उनकी भेंट अगइदत्ता नाम के एक साधु से हुयी। श्री गुरुदेव भगवान अपने व्याख्यानों में बतलाया करते थे कि वो सिद् पुरुष थे और उनके क्रियाकलाप भी बड़े अद्भुत होते थे। योगी अगइदत्ता जी कहा करते थे कि जो खाता है सो मरता है और जो सोता है, सो मरता है। यह बात उन्होंने श्री गुरुदेव जी से कई बार कही और इसका अर्थ भी समझाया कि योगिजन जो काल विजयी हैं, वो न कुछ खाते हैं और न सोते हैं। इस धरती पर रहने वाले सभी प्राणी खाते हैं और सोते हैं, अत.एव उनकी मृत्यु निश्चित है। इसलिये इसे मृत्युलोक भी कहा जाता है।

कुछ लोगों के मन में यह प्रश्न स्वाभाविक ही उठता होगा कि उन्होंने बहुत से सिद्धयोगियों के विषय में पुराणों में सुना होगा कि वो खाते–पीते भी हैं और कालजयी भी हैं। वास्तव में सिद्धयोगियों की लीला मानव मन की सोच के परे है। वो सब कुछ करते हुये भी कुछ नहीं करते।

श्री गर्ग संहिता के माधुर्य खण्ड के अध्याय १ में इसी प्रकार की एक कथा का वर्णन है। एक बार गोपियों के मन में श्री दुर्वासा मुनि जी के दर्शनों की प्रबल अभिलाषा हुयी, जो यमुना जी के उस पार तप कर रहे थे। यमुना जी का प्रवाह तेज था तो उन्होंने अपनी चिंता भगवान श्री कृष्ण जी से कही। श्री भगवान बोले ''यदि तुम लोगों को उस पार जाना है तो यमुना जी से इस प्रकार कहना ''यदि श्रीकृष्ण बालब्रह्मचारी और सब प्रकार के दोषों से रहित हैं तो सरिताओं में श्रेष्ठ यमुना जी हमारे लिये मार्ग दे दो।'' उनका यह वचन सुनकर सभी गोपियाँ अलग–अलग पालों में छप्पन भोग लेकर यमुना जी के तट पर पहुँची और श्रीकृष्ण जी के वचन सुनायें। यमुना जी ने उन्हें तुरंत मार्ग दे दिया। यमुना जी पार करके गोपियाँ भांण्डीर वट के पास पहुँची, उन्होंने दुर्वासा मुनि की परिक्रमा की और उनके आगे बहुत सी भोजन सामग्री रख कर उनका दर्शन किया और अन्न ग्रहण करने की प्रार्थना की। श्री दुर्वासा मुनि ने वह सभी अन्न ग्रहण किया। फिर गोपियों ने वापस जाने की चिंता प्रकट की तो मुनिवर बोले कि जब तुम यमुना

किनारे पहुँचो तो यमुना जी से इस प्रकार कहना ''यदि दुर्वासा मुनि इस भूतल पर केवल दूर्वा का रस पीकर रहते हों, कभी अन्न और जल न लेकर व्रत का पालन करते हों तो हे सरिताओं की शिरोमणि यमुना जी हमें मार्ग दे दो।'' गोपियों ने ऐसा ही किया और यमुना जी ने उन्हें मार्ग दे दिया। इसके बाद उन्होंने भगवान से प्रश्न किया कि यह कैसे सम्भव हुआ जबकि मुनि को हमने स्वयं भोजन कराया और आप भी सभी गोपियों के उपपति हैं और बचपन से रसिक हैं, तो फिर हमारी शंका का निवारण करिये। तब भगवान बोले कि योगयुक्त पुरुष कर्मों में आसक्त नहीं होते इसलिए वो कर्मों से बंधते नहीं हैं।

परन्तु उपर्युक्त बातें सिद्धयोगियों के विषय में हैं, जो साधारण मनुष्य हैं, भोजन और निद्रा का त्याग करना उनके वश की बात नहीं। इस मृत्युलोक में रहना है तो भोजन और निद्रा ग्रहण करना ही होगा। जो उच्च श्रेणी के साधक हैं वो अपनी साधना के क्रम में धीरे–धीरे भोजन और निद्रा का त्याग भी कर देते हैं। अतः यह स्पष्ट है कि मृत्युलोक में जीवन का आधार भोजन और निद्रा है।

जगदात्मा भगवान श्रीकृष्ण महात्मा अर्जुन को भोजन और निद्रा दोनों के विषय में ही सचेत करते हैं।

आहार और निद्रा के विषय में भगवान कहते हैं–

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ।। 6/16

हे अर्जुन! जो बहुत भोजन करता है, जो निराहार रहता है और जो बहुत सोता या जागता है, इन सबको योग की सिद्धि नहीं मिलती।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ।। 6/17

जो मनुष्य आहार–विहार प्रमाण से करते हैं, कर्म भी प्रमाण से करते हैं, जो प्रमाण से ही जागते और सोते हैं, उन्हें दुःखों को दूर करने वाला योग सिद्ध होता है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने एक बार कहा था कि यदि तुम किसी के चरित्र के विषय में जानना चाहते हो तो उसके भोजन के विषय में जानकारी कर लो "Let me know what you eat, I will know what you are" और पुरानी कहावत भी है, ''जैसा खाये अन्न, वैसा होवे मन''।

साधक तन का आहार–भगवान श्रीमद्भगवद् गीता में 17वें अध्याय में बताते हैं कि किस प्रकार का भोजन किस प्रकार के लोगों को प्रिय है।

आयुः सत्व बलारोग्य सुखप्रीतिविवर्धनाः।

रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृदया आहाराः सात्विक प्रियाः।। 17/8

आयु, सत्व, बल, आरोग्यता, सुख और प्रीति को बढ़ाने वाले रस और घृत से युक्त अपने रक्षांश से बहुत काल तक देह में रहने वाले और हृदय के हितकारी आहार सात्विक लोगों को प्रिय होते हैं।

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्ण रुक्ष विहाहिनः।

आहारा राजसस्येष्टा दु:ख शोका मयप्रदाः।। 17/9

कड़वे, खट्टे, नमकीन, अत्यन्त गर्म और जलन उत्पन्न करने वाले आहार रजोगुण वालों को प्रिय लगते हैं, इनके सेवन से दु:ख, अप्रसन्नता और रोग उत्पन्न होते हैं।

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।

उच्छिष्टमपि चमिधं भोजनं तामस प्रियम्।। 17/10

एक प्रहर के पहले जो पकाया गया हो, जिसका रस सूख गया हो, जो दुर्गन्ध युक्त, बासी, उच्छिष्ट और अपवित्र हो, ऐसा भोजन तामसी प्रकृति वालों को रुचता है।

इसके अतिरिक्त साधक को भोजन के विषय में कुछ बातें और ध्यान रखनी चाहिए। उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि जो भोजन वह कर रहा है–

1– वह अन्न किस प्रकार प्राप्त किया गया

2– वह अन्न किस प्रकार के पैसों से प्राप्त किया गया

3– वह अन्न किस भावना से पकाया गया

4– वह अन्य किस भावना से परोसा गया

भोजन के साथ जिस प्रकार की भावना जुड़ी होती है वो सीधे–सीधे तन और मन को प्रभावित करती है। इसके अतिरिक्त भोजन बनाने वाली की ऊर्जा, उसकी अंगुलियों द्वारा सीधे भोजन में प्रवेश करती है। तो जैसी उसकी ऊर्जा सकारात्मक या नकारात्मक होगी, वैसे ही भाव आपके मन में उदित होंगे वह भोजन ग्रहण करने के बाद।

इसी सन्दर्भ में आन्दकन्द श्री महाप्रभुजी की एक घटना है। एक बार श्री महाप्रभुजी ऋषिकेश धाम में अपने योग साधन आश्रम में विराजमान थे। तभी वहाँ पर एक दरोगा श्री महाप्रभुजी के दर्शनार्थ आया और अपने साथ कुछ मिठाई के डिब्बे भी लाया और श्री प्रभुजी को उसने ये मिठाई भेंट की। उसके जाने के बाद श्रीप्रभुजी ने उन डिब्बों को एक कोने में रखवा दिया और आज्ञा दी कि इस मिठाई को किसी को न बांटे। कुछ समय बाद श्री प्रभुजी विश्राम के लिए चले गये और जिसको श्री प्रभुजी ने आज्ञा दी थी वो भी कहीं चले गये। उसके बाद किसी गुरुमाई की नजर उन डिब्बों पर पड़ी, उसे श्रीप्रभुजी की आज्ञा के विषय में ज्ञात न था,

तो उसने वह मिठाई आश्रम में बंटवा दी। अगले दिन से ही सभी ध्यानियों का ध्यान लगना बंद हो गया। उन्होंने श्रीप्रभुजी को यह बात बताई तो श्रीप्रभुजी ने उस मिठाई के बारे में पूछा तो पता चला कि उन लोगों ने वह मिठाई खायी थी। श्री प्रभुजी को पता था कि दरोगा के द्वारा लायी गई मिठाई उचित पैसों (नेक कमाई) की नहीं है, इसी के प्रभाव से इन सबका ध्यान लगना बंद हो गया, फिर कुछ दिनों बाद ही उनका ध्यान आरम्भ हुआ।

जिन साधकों का ध्यान योग में प्रवेश हो चुका है अथवा जो इस ओर बढ़ रहे हैं वो भलीभाँति जानते हैं कि मन पर भोजन का प्रभाव तुरंत पड़ता है। इसी सन्दर्भ में मुझे एक और घटना याद आयी जो मेरी मौसी परम साध्वी रुकमणी देवी जी से सम्बन्धित है। मेरे पिताजी पेशे से डॉक्टर हैं और क्लीनिक से घर आते समय वो नित्यप्रति कुछ फल अवश्य लेकर आते हैं। एक बार मौसी जी हमारे घर आयी हुयी थीं, यह घटना उन्हीं दिनों की है। पिताजी क्लीनिक से घर आ रहे थे तो एक मरीज ने उन्हें रोककर कुछ पैसे दिये जो उस पर बाकी थे। पिताजी उन्हीं पैसों से उस दिन के लिए फल ले आये जो घर के सभी सदस्यों और मौसी जी ने भी खाये। उसी रात मौसी जी को स्वप्न आया जैसे सब तरफ खून ही खून बिखरा पड़ा है, जानवर कटे पड़े हैं और भी इसी तरह के दृश्य रात भी दिखते रहे।

सुबह उठकर उन्होंने सारी बात बतायी तब पिताजी ने बताया कि जिन पैसों के वो फल लाये थे वो उन्हें एक मरीज ने रास्ते में दिये थे और वह मरीज पेशे से कसाई था। तब सारी बात समझ में आयी कि क्यों इस प्रकार के स्वप्न आये। इसी प्रकार यदि मौसी जी गलती से शादी में मिले रुपयों का कुछ खाये तो उन्हें दुल्हा–दुल्हन विवाह मण्डप आदि के स्वप्न आने लगते हैं।

मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि आपको जो पैसा मिल रहा है वो सामने वाले व्यक्ति ने किस प्रकार प्राप्त किया, इसका प्रभाव आपके ऊपर अवश्य पड़ता है। साधारण जन इस प्रभाव को महसूस नहीं कर पाते परन्तु साधक इसके प्रभाव को तुरंत अनुभव कर लेते हैं। इसी प्रकार रजोगुण और तमोगुण प्रधान भोजन शरीर में अनेकों प्रकार के विकार उत्पन्न करते हैं।

साधक मन का आहार–मन का आहार, ये शब्द भले ही सुनने में अजीब से लगें, परन्तु क्या आपने कभी सोचा है कि हम अपने मन को किस प्रकार का आहार ग्रहण कराते हैं। स्वस्थ शरीर के लिए हम लाखों जतन करते हैं, पौष्टिक से पौष्टिक आहार अपने शरीर को ग्रहण कराते हैं परन्तु क्या कभी मन के विषय में सोचा है कि वो कैसा भोजन कर रहा है।

सबसे पहले हमें यह मनन करने की आवश्यकता है कि मन के ऊपर नियंत्रण की आवश्यकता क्या है। हमार यह जो शरीर है यह भवसागर में पड़ी नौका की तरह है, जितना सबल, स्वस्थ, सतोगुणी यह शरीर होगा, उतनी ही मजबूत हमारी भवसागर रूपी नौका होगी।

परन्तु यदि आपकी नौका तो मजबूत है लेकिन उसका नाविक (आपका मन) सबल ना हो, स्वस्थ ना हो तो आप कल्पना कर सकते हैं कि वो नाविक (मन) आपकी नौका (शरीर) को किस दिशा में ले जायेगा।

मन के विषय में भगवान श्रीकृष्ण महात्मा अर्जुन को बताते हैं–

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः।
शीषोष्ण सुखदु:खेषु तथा मानापमानयोः।। 6/7

जिसने अपना मन अपने वश में कर लिया है, और जो शीत–ग्रीष्म, सुख–दु:ख और मान–अपमान को एक समान जानकर शाँत रहता है, उसके हृदय में परमात्मा स्थिर रहता है।

ज्ञान विज्ञान तृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः।। 6/8

जिसकी आत्मा ज्ञान से संतुष्ट है, जिसका मन स्थिर है और जिसने इन्द्रियों को जीत लिया है। जो सुवर्ण और पाषाण को समान समझता है, वह योगी युक्त कहलाता है।

हमारा शरीर मुख्यतः एक ही द्वार से भोजन ग्रहण करता है जिसे मुख कहते हैं, परन्तु हमारे मन के ५ मुख हैं जिन्हें हम इन्द्रियाँ कहते हैं। जी हाँ इन्हीं ५ इन्द्रियों के द्वारा हमारा मन तरह–तरह के विषयों को भोजन के रूप में ग्रहण करता है। जिस प्रकार हम स्वस्थ शरीर से साधना करने के लिए विभिन्न प्रकार के भोजन एवं स्वाद पर नियंत्रण करते हैं उसी प्रकार मन द्वारा साधना करने के लिए आवश्यक है कि हम ध्यान दें कि यह मन हमारी इन्द्रियों द्वारा किन विषयों को ग्रहण कर रहा है। हमारी ये जो पाँच इन्द्रियाँ हैं (आँख, कान, नाक, जिव्हा, त्वचा) ये ही मन के मुख हैं और इनके द्वारा जो भी संवेदनायें/विषय (दृश्य, श्रवण, घ्राण, स्वाद, स्पर्श) हम ग्रहण करते हैं, यही मन का भोजन है।

जिस प्रकार भगवान आहार के विषय में हमें उपदेश करते हैं कि सतोगुणी आहार ही ग्रहण करने योग्य है।

उसी प्रकार दैवी सम्पदा वाले गुण ही इस मन के ग्रहण करने हेतु हैं। गीता में भगवान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि उनकी यह प्रकृति त्रिगुणमयी है–

सत्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृति सम्भवाः।
निवध्नन्ति महावाहो देहे देहिनमव्ययम्।। 14/5

हे महाबाहो! सत्, रज और तमोगुण ये तीनों प्रकृति से उत्पन्न हुये हैं, ये अविनाशी जीव को इस देह में बांधते हैं।

अतः हमें चाहिए कि हम इन मन के द्वारों (इंद्रियों) द्वारा केवल सतोगुणी विषयों को ही ग्रहण करें और अन्य विषयों को त्याग करे।

1. नेत्र द्वारा दर्शन करे तो ईश्वर का, उनके विग्रह का, उनके स्वरूप का, उनकी कृपालीलाओं का।
2. कानों द्वारा श्रवण करे तो प्रभु की लीलाओं का, सत्संग का, ईश्वर के नाम का।
3. नाक द्वारा गंध ग्रहण करे तो सुगंधित वातावरण की जिसमें प्रभु विराजमान हो सकें।
4. जिव्हा द्वारा हरि नाम का उच्चारण करे, मंत्र जप करे, प्रभु की लीलाओं का गुणगान करें।
5. त्वचा द्वारा स्पर्श ग्रहण करे प्रभु के चरण कमलों का, अनुभव करे उनके हाथ को अपने सिर पर आशीर्वाद देते हुये, श्रीगुरुदेव भगवान का दुलार याद करें।

यही इस मन का सच्चे अर्थों में सात्विक आहार है। इसी को निरंतर ग्रहण करने से देवी सम्पदा का उदय होता है। जो साधक इस मन द्वारा सतोगुण, रजोगुण अथवा तमोगुण को ग्रहण करते हैं, भगवान उसका फल बताते हैं—

तत्रसत्वं निर्मलत्वात्प्रकाश कमनायम्।
सुखसंगेन बध्नाति ज्ञान सङ्गेन चानघ।। 14/6

हे निष्पाप! उन तीनों गुणों में से सतोगुण निर्मल, रोगरहित और शान्ति स्वरूप है। इसी से यह सतोगुण शान्तिकार्य, सुख और प्रकाश कार्य के ज्ञान से जीवों को बांधता है।

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्नि बध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम्।। 14/7

हे कौन्तेय ! रजोगुण को अनुरागात्मक जानो। यह तृष्णा और आसक्ति से उत्पन्न होता है और कर्म की वासना से जीव को बांध देता है।

तमस्त्वज्ञानजं विद्धिमोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्य निद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।। 14/8

हे भारत् ! तमोगुण अज्ञान से उत्पन्न होता है और सम्पूर्ण प्राणियों को मोहने वाला होता है। यह प्रमाद, आलस्य और निद्रा द्वारा जीव को बांधता है।

यदा सत्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां लोकानमला–प्रतिपद्यते।। 14/14

सतोगुण की वृद्धि होने पर यदि प्राणी देह त्याग दे तो वह ज्ञानियों के निर्मल लोको को प्राप्त होता है।

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमति मूढयोनिषु जायते।। 14/15

जो प्राणी रजोगुण की वृद्धि में मरता है, वह कर्मासक्त मनुष्यों में जन्म लेता है। जो तमोगुण की वृद्धि से मरता है, वह पशुयोनि में जन्म लेता है।

भगवान पतंजलि देव जी ने भी अष्टांग योग के क्रम में सर्वप्रथम यम और नियम को स्थान दिया है जो मन को सतोगुण की ओर ले जाने वाले हैं।

मन के जो ग्रहण करने योग्य विषय हैं और जो त्याज्य विषय हैं उनका विस्तारपूर्वक वर्णन भगवान गीता के सोलहवें अध्याय में करते हैं यथा–

अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोग व्यवस्थितिः।
दानं दमश्य यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्।। 16/1

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मर्दिवं हीरचापलम्।। 16/2

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भविन्त सम्पदं देवीमभिजातस्य भारत।। 16/3

श्री भगवान बोले–हे अर्जुन! निर्भयता, चित्त की शुद्धि, आत्मज्ञान में निष्ठा, सुपात्र को दान देना, इन्द्रियों का निग्रह, पच्चमहायज्ञों का अनुष्ठान, वेदों का पठन, तपश्चर्या, सरलता।

किसी की हिंसा न करना, सत्य भाषण करना, क्रोध न करना, दान देना, शान्ति, किसी की निन्दा न करना, प्राणिमात्र पर दया करना, चित्त स्थिर रखना, स्वभाव में कोमलता, निन्दित कर्मों से लजाना, चंचलता को त्याग देना।

तेज, क्षमा, धैर्य, पवित्रता, किसी से द्रोह नहीं करना, अभिमान न करना, हे भरतवंशी अर्जुन! ये दैवी सम्पत्ति से युक्त पुरुष के लक्षण हैं।

इस प्रकार भगवान के वचनों को स्मरण रखते हुए हमें अपने अन्दर दैवी सम्पदा बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए और अपने मन को उचित आहार के द्वारा पुष्ट एवं सतोगुणी बनाये रखना चाहिए।

शरीर को स्वस्थ और मन को सतोगुणी बनाना एक लम्बे अभ्यास के फलस्वरूप ही सम्भव है। शरीर में भोजन के कारण अथवा मन की विषयों के विकार के कारण कई प्रकार की विषमतायें उत्पन्न हो जाती हैं जो मुख्यतः रजोगुण या तमोगुण बढ़ने के कारण होती है। इन सबके उपचार के लिए मैं कुछ औषधियों के बारे में बताऊगा जिससे ये विकार शीघ्र दूर हो सकें।

भोजन की विषमताओं के कारण उत्पन्न रोग और उपचार–

विभिन्न प्रकार की होम्योपैथिक औषधियाँ इन विकारों को दूर करने में सहायक हैं–

1–अत्याधिक मैदायुक्त भोजन के कारण

रोग		*होम्योपेथिक दवायें*
–पेट की तकलीफ	–	Lycopodium, Causticum, Natrum Mur, Nux Vomica, Sulphur
–डकारें/मितली	–	Natrum Carb, Sulphur
–पेट में दर्द	–	Colocynth Petroleum
–दस्त	–	Lycopodium, Natrum Carb, Natrum Mur, Natrum Sulph.

2–अत्याधिक चिकनाई युक्त भोजन के कारण

रोग		*होम्योपेथिक दवायें*
–पेट की तकलीफ	–	Asafoetida
–डकारें	–	Ferrum Met, Ferrum Mur
–छाती में जलन	–	Causticum, Natrum Carb, Nitric Acid, Nux Vomica, Phosphorus
–हिचकी	–	Jaglence Rejia
–उल्टी	–	Aconite, Pustatilla
–पेट फूलना	–	Bellis Per
–दस्त	–	Antim Crude, Carbovej, Lycopodium, Pulsatilla, Thuja.
–खांसी	–	Ipecac, Majneria Mur, Pulsatilla

3–अत्याधिक खट्टे पदार्थ युक्त भोजन के कारण

रोग		*होम्योपेथिक दवायें*
–पेट की तकलीफ	–	Aloe, Antim - Crude, Arsenic Alb, Carbo veg, china, Nat mur, Nux vomica
–डकारें	–	Arsenic, Nux Vomica, Phosphorus, staphys.
–उल्टी	–	Calcaria Carb, Ferr met, Hep Sulph
–पेट में गैस/बदहजमी	–	Phosphoric Acid
–दस्त	–	Antim Crude, Ipecac, Lachesis, Podophyllum
–खाँसी	–	Nux Vomica, Sepia, Sulphur

4–अत्याधिक मसालेदार भोजन के कारण

रोग		*होम्योपैथिक दवायें*
–खाँसी	–	Alumina, Sulphur, Thuja
–मितली	–	Aqua pur.
–पेटदर्द	–	Menjifere Indica
–बदहजमी	–	Nux Vomica, Kalimur, Phosphorus

5–बादी पदार्थ खाने के कारण – इसमें Bryonia, chine, Lycopodium, Petroleum आदि दवायें मुख्य रूप से प्रयोग में आती हैं।

मन की विषमताओं के कारण उत्पन्न रोग और उपचार–

कारण		*होम्योपैथिक दवायें*
–लम्बी प्रताड़ना/उत्पीड़न	–	Carcinocin, Medorohinum, Platina, Ignatia, Natrum Mur
–कोई उत्कट इच्छा ना पूरी हो पाना	–	Merc sol, Natrum Mur, Nux Vomica, Pulsatille
–गुस्सा मन में दबाना	–	Colocynth, Staphysajria, Aurum Met, Natrum Mur, Nux Vomica, Ignatia
–गुस्से और गहरे दुःख को मन में ही रखना	–	Ignatia, Lycopodium, Natrum Mur, Staphysajria.
–कोई काम शुरू करने में घबराहट	–	Argentum Nitricum, Gelsemium, Lycopodium, Pulsatille, Medorihinum
–कोई बुरी खबर सुनने के बाद	–	Arnica, Calcaria Carb, Gelsemium, Ignatia, Natrum Mur, Staphysajria
–Business fail होने के कारण	–	Ambra gresia, Aurum Met, Cimicifuga
–किसी की अत्याधिक चिंता या देखभाल के कारण	–	Ambra gresia, Cocculus Indicus, Nux Vomica, Phosphoric Acid.
–किसी के विचारों से विरोध के कारण	–	Aurum Met, Lycopodium, Nux Vomica, Petroleum

—किसी प्रिय की मृत्यु के बाद	—	Aconite, Arsenic, Ignatia, Lachesis, Opium, Staphysajria.
—जीवन में अत्याधिक निराशा	—	Aur met, Ignatia, Natrum Mur, Phosphoric Acid, Pulsatilla, Staphyrejria
—किसी वजह से शर्मिन्दा होने के कारण (Especially in Public)	—	Ambra gresia, Baryta Carb, Ignatia, Natrum Mur, Sulphur
—अत्याधिक डर	—	Aconite, Gelsemium, Opium, Causticum, Ignatia
—कोई भयानक दुर्घटना देखने के बाद (Accident)	—	Aconita, Calcaric Carb, Opium
—अपमान होने के कारण	—	Aurum Sulph, Natrum Mur, Staphysijria
—किसी के प्रति अत्याधिक जलन भावना के कारण	—	Apis Mel, Hyoscymus, Ignatia, Lachesis Nux Vomica, Pulsatilla
—नौकरी छूट जाने के बाद	—	Ignatia, Platina, Staphysejria
—प्रेम में धोखा मिलने के बाद	—	Aurum met, Causticum, coffea, Hyoscymus, Ignatia, Natrum mur, Lachesis, Phos Acid, Staphysajria
—अत्याधिक मानसिक थकान से	—	Anacardium, Calcaria Phos, Gelsemium, Nux Vomica, Silicea.
—पैसा खोने/डूबने के बाद	—	Arnica, Aurum met, Calcaria Carb, Ignatia.
—झूठे आरोप लगने के कारण	—	Ambra gresia, Ignatia, Opium, Platina, Staphysejria
—दूसरों के कठोर व्यवहार के कारण	—	Calcaria Carb, Lycopodium, Natrum Mur, Staphysajria
—किसी के डाँटने के बाद	—	Bryonia, Chemomilla, Colocynth, Natrum Mur, Nux Vomica, Staphysajria

Note —यह दवाओं और कारणों की पूर्ण सूची नहीं है, केवल संकेत मात्र हैं।
—कोई भी दवा किसी कुशल चिकित्सक के परामर्श से ही लें।

योगावतार प्रभु श्री रामलाल जी महाराज

— दिनेश चन्द्र शर्मा

योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने लुप्त हो रही योग विद्या के पुनरुद्धार और लोककल्याण के लिए अवतार लिया। अमृतसर में विक्रमी सम्वत् 1645 चैत्र नवमी वृहस्पतिवार को पूज्यपाद ज्योतिषवर पण्डित गन्डाराम जी एवं माता भागवन्ती के घर आपने जन्म लिया। पिताश्री गंडाराम जी ने जब बालक की जन्मपत्री बनाई तब अत्यन्त प्रसन्नता से कहा कि यह बालक योगियों में श्रेष्ठ और योग का प्रकाश करने वाला होगा। आप में जन्मजात सिद्धियों का वास था।

जब आप लगभग एक वर्ष के ही थे तो इनके दर्शन मात्र से एक मरणासन्न वृद्ध महिला मृत्यु शैय्या से उठ बैठी और पूर्ण स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया। पाँच वर्ष की आयु में जब पाठशाला में प्रविष्ठ हुए तो इनकी अलौकिक प्रतिभा से अध्यापकगण भी स्तब्ध रह गये। आपकी आठ वर्ष की आयु थी, तब एक योगी महात्मा अमृतसर में आये और इनके बालरूप में दिव्य ईश्वरीय दर्शनों का लाभ प्राप्त किया।

प्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने भारतवर्ष का व्यापक भ्रमण किया और लुप्त योग विद्या के पुनरुद्धार के लिए योग का दिव्य सन्देश जगत को दिया। योग की शिखा के प्रसार हेतु जनकल्याण के लिए योग साधन आश्रमों की स्थापना की। लोगों को अनुभव कराया कि योग ही दिव्य और अविनाशी जीवन है। योग स्वस्थ जीवन की कला और विज्ञान है। योग से ब्रह्म का दर्शन प्राप्त किया जा सकता है। योग शरीर एवं मन के निर्माण की ऐसी प्रक्रिया है जो समृद्ध और परिपूर्ण जीवन की उन्नति का मार्ग है।

प्रभु जी ने देश व्यापी भ्रमण के दौरान लोगों को योग शिक्षा–दीक्षा दी। अष्टांग योग को सहजता से बताया। अनेक साधकों पर शक्तिपात की कृपा की। करुणा के सागर श्री प्रभुजी ने अपनी दिव्य और कृपा लीलाओं से असंख्य लोगों पर कृपा की और योग मार्ग पर अग्रसर किया। ग्राम जसपुर में कुम्हार के बालक को खेचरी की सिद्धी प्रदान की। अल्मोड़ा की अयोध्या में दुखिया अवधूतनी को दिव्य समाधि प्रदान की। काशी में वाम मार्गियों को योग मार्ग में लगाया।

प्रभुजी दक्षिण की ओर भी गये। नर्मदा नदी के साथ–साथ पश्चिम की ओर यात्रा की। उस समय उनके साथ शिष्य रूप में एक बड़ी साधु मण्डली भी थी। मार्ग में पड़ाव के समय आपने अपनी अलौकिक शक्ति से कई भूतग्रस्त स्थानों की शुद्धि की। ब्राह्मण बालक हरिराम (जो हरिहरानन्द के नाम से विख्यात हुए) की भक्ति, दानशीलता और शूरवीरता आदि पर प्रसन्न होकर योग की उच्च स्थिति और योग सिद्धियाँ प्रदान की।

इन मंगल यात्राओं के दौरान प्रभुजी ने अनेक तपोनिष्ठ महात्माओं को दर्शन देकर कृतार्थ किया और योग विद्या के रहस्यों को समझाया। यात्रा के समय भी श्री प्रभुजी ने दो योग शरीरों की रचना कर एक शरीर नासिक नगरी में त्यागा और दूसरे शरीर से उत्तर दिशा की ओर शिष्य मण्डली सहित चलकर पुष्कर राजतीर्थ पहुँचे और वहाँ से पूर्व की लम्बी यात्रा की। गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज ने अपने व्याख्यानों में कहा है कि श्री प्रभुजी ने कई योग शरीर बनाकर योग विद्या का प्रसार किया और लोगों पर अहैतुकी कृपाएँ की। प्रभुजी के नामों की स्तुति में ''निर्माण काय धारिणे नमः'' कहकर भी स्तुति की जाती है।

श्री प्रभु जी की यह यात्रा अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। बंगाल-बिहार सीमा पर उन्होंने एक कुसंगग्रस्त लड़की रामरती को सन्मार्ग पर लगाया और योग समाधि का दिव्य प्रसाद प्रदान कर उसे जगत पूज्य बना दिया। ''यस्य प्रसादात् पतितः सुपावना, भवन्ति संसार सुतारण शिवा'' के अनुरूप अनेक कृपा लीलाएं प्रभुजी ने की और ऐसी कृपा लीलाएं निरन्तर हो रही हैं।

पटना में श्याम नारायण वकील को शरण में लिया। एक निर्दोष ब्राह्मण बालक को फांसी के दण्ड से मुक्त कराया। हरिहर राय जज को योग की दीक्षा दी। हरनाम दास तपस्वी को सिपाहियों के चंगुल से छुड़ाकर योग समाधि में बैठाकर सुखी किया।

बंगाल में जज आशुतोष चटर्जी और उनकी पत्नी रामा को योग की शिक्षा देकर योग की उच्च स्थिति प्रदान की। फिर असम में घने जंगलों-वनों, जंगली हाथियों, नरसंहारी मनुष्यों, भयंकर वन्य पशुओं वाले संकीर्ण स्थलों से होते हुए ब्रह्मपुत्र नदी को पार कर मय नामक ग्राम में राजा रणसिंह और उनके योगी गुरू से मिले।

वहां से लौट कर श्री प्रभुजी ने नेपाल की यात्रा की। नेपाल के राज परिवार को दर्शन दिये। वहां से अपनी मण्डली को छोड़ कर अकेले ही दूर उत्तर की ओर चल पड़े। यहां पर भगवान शिव अवतारी महाप्रभु जी सुमेरू पर्वत से प्रभुजी को लेने आये और आकाश मार्ग से प्रभु जी को हिमालय में सिद्ध स्थान पर ले गये।

भगवान श्री शिव अवतारी महाप्रभु जी से कुछ वर्षों तक पूर्णयोग की शिक्षा प्राप्त कर उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करके प्रभुजी वहां से लौट आये और योग का दिव्य सन्देश जगत को दिया और लोगों का कल्याण किया। **''जीवन तत्व साधन''** के रूप में अद्भुत आविष्कार मनुष्यों को प्रदान किया। जीवन तत्व साधन की नौ क्रियाओं में सभी योग आसनों का समुच्चय है। प्रभुजी ने नेति आदि क्रियाओं का साधकों को अभ्यास कराया और उस समय में गोपनीय मानी जाने वाली इन क्रियाओं को जन सामान्य को सुलभ करा कर अहैतुकी कृपा की। असंख्य लोगों ने साधना कर अनुभव किया कि ध्यान से मन की शुद्धि के साथ बुद्धि निर्मल होती है। ध्यान से दैहिक, दैविक और भौतिक तीनों प्रकार के तापों का विनाश और पापों का नाश होता है। ध्यान से कर्मों के बन्धन कटते हैं। ध्यान से कुकर्मों से बचाव और शान्ति तथा परमानन्द

का अनुभव होता है। ध्यान से साधक में अति इन्द्रिय क्षमताओं का विकास सम्भव है। अतः सद्गुरु से विनिर्दिष्ट विधि से नित्यध्यान करना चाहिए।

श्री प्रभुजी की कृपा लीलाएं अनन्त हैं। श्री सिद्धगुफा संवाई आश्रम भी प्रभुजी की दिव्य तपोस्थली है। संवाई में भी लोगों ने दिव्य चमत्कार देखे हैं। प्रभु जी द्वारा आकाश मार्ग से जाना, एक समय में कई स्थानों पर दर्शन देना, तालाब के जल में शक्तिपात से लोगों के इस जल से चर्मरोग दूर किये, अनेक लोगों को दुःख–दारिद्रय से छुटकारा मिला और आध्यात्मिक उन्नति हुई। जीवन तत्व साधन के अभ्यास से जठराग्नि प्रदीप्त होने पर साधकों के लिए खेत में बड़ी संख्या में लौकी लग जाना, जैसी चमत्कारिक अनेक घटनाएँ सहज रूप से घटित होते हुए लोगों ने देखी हैं। अनेक जनों पर करुणावतार श्री प्रभु जी ने 'शक्तिपात' कर धन्य किया। असंख्य लोगों को योग मार्ग पर अग्रसर किया। आज सम्पूर्ण विश्व में 'योग' का प्रसार प्रभुजी की कृपा का फल है। उनके परम शिष्य योगीराज श्री चन्द्र मोहन जी महाराज ने भी श्री प्रभुजी की आज्ञा का अनुपालन करते हुए योग विद्या का व्यापक स्तर पर प्रचार–प्रसार किया और योग के गूढ़ रहस्यों को जन–जन को सरलता से समझाया।

करुणावतार व योगावतार प्रभु श्री राम लाल जी महाराज और सद्गुरु देव योगेश्वर श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की दिव्य योग लीलाओं के श्रवण, मनन, पठन–पाठन से लोग निरन्तर लाभान्वित हो रहे हैं। जो जन श्रद्धापूर्वक उनका स्मरण करते हैं, करुणा सागर की कृपा उन पर बनी रहती है।

प्रभु श्री रामलाल जी महाराज की महिमा अपार है। उनकी अनगिनत दिव्य–कृपा लीलाओं का वर्णन करना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। शिव महिम्न स्तोत्र के रचयिता पुष्पदंत जी के शब्दों में–

असित गिरि समं स्यात कज्जलं सिन्धु पात्रे,
सुरतरूवर शाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्व कालम्,
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।।

समुद्र की दवात में हिमालय पर्वत के बराबर मसि (स्याही) घोली जाये, महान देववृक्ष की विशाल शाखा को कलम बनाया जाये और समूची पृथ्वी को कागज बना लिया जाये और स्वयं सरस्वती उनके गुणों का समूचे कालावधि में उल्लेख करें, तो भी उनके गुणों का अन्त नहीं हो सकता।

प्रभुजी श्री रामलाल जी महाराज के गुणों की महिमा, यौगिक उपलब्धियों, व्यापक स्वरूप, प्रभुता, महत्ता, विशालता, अनन्त रूपता के सम्बन्ध में कुछ कहना विडम्बना मात्र है। उनके गुणानुवाद, कीर्ति, कीर्तन और चारित्रिक चर्चा से लोक कल्याण होता है। उनके द्वारा बताये योग मार्ग पर चलकर अपना जीवन सफल बनावें।

प्रभु का प्यार

तुमको प्रभु का प्यार मिला है।
मत सोचो, मैं हूँ एकांकी, कोई नहीं अवलम्बन मेरा,
जब-जब ध्यान किया है तुमने, उसका सार-संभार मिला है।
तुमको प्रभु का प्यार मिला है।।

सरिता के कल-कल विलास में, औ सुमनों के मधुर हास में,
विहंगों के कल कूजन में प्रिय, उसका स्वर साकार मिला है।
तुमको प्रभु का प्यार मिला है।।

घर गृहस्थ के कामभोग में, यतियों के अविराम योग में,
प्रियतम के दारुण वियोग में, उसका ही आधार मिला है।
तुमको प्रभु का प्यार मिला है।।

ज्ञानी की गम्भीर चाह में, दीनों की भी करुण आह में,
भ्रमित जनों की विषम राह में, यह जीवन पतवार मिला है।
तुमको प्रभु का प्यार मिला है।।

तन्त्र-मन्त्र विज्ञान-ज्ञान में, दुख-द्ररिद्रता के विधान में,
शान्ति-सौख्य संयुत विहान में, उसका दिव्य विचार मिला है।
तुमको प्रभु का प्यार मिला है।।

लेखक : भानुदत्त त्रिपाठी

सहयोग राशि के नाम 2016-2017

1.	श्री अमरनाथ सक्सैना	शिवपुरी	5100
2.	श्री देवेन्द्र नगरिया	झाँसी	1000
3.	श्री श्रीजय कुमार	मातण्ड	500
4.	श्री गोवर्धन भारद्वाज	मातण्ड	200
5.	श्री मंगल दत्त शर्मा	शेखपुराखाल	500
6.	श्री परमात्मा पांडे	वत्सी	100
7.	श्री राजू खण्डेलवाल	सूरत	511
8.	श्री शिव नरेश मिश्रा	वेवर	551
9.	श्री पं. लीलाधर पंडित	गंगापुर सिटी	500
10.	श्री राकेश कुमार भारद्वाज	टूण्डला	500
11.	श्री आनन्द प्रकाश	एत्मादपुर	500
12.	श्री मदन मोहन अग्रवाल	गंगापुर सिटी	1100
13.	श्री राधेश्याम जी सेवानिवृत	गंगापुरसिटी	1100
14.	श्री मुकेश मंगल	गंगापुर सिटी	1100
15.	श्री ओम प्रकाश गुप्ता	गंगापुर सिटी	1100
16.	श्री राजेन्द्र गोयल लेखक	गंगापुर सिटी	1100
17.	श्री विनोद गोयल	गंगापुर सिटी	1100
18.	श्री राजेश गुप्ता बड़दाडा	गंगापुर सिटी	1100
19.	श्री घनश्याम लाल गुप्ता	गंगापुर सिटी	1100
20.	श्री मदन मोहन अगरबत्ती	गंगापुर सिटी	1100
21.	श्री हर्षित सिंह अर्जुन सिंह	कछवा	500
22.	श्री अभिमन्यु सिंह	कछवा	1100
23.	श्री रामचन्द मलिक	बेला	1100
24.	श्री कर्मवीर सिंह	गडोडरा	1100
25.	श्री विरेन्द्र पाल	करनाल	500
26.	श्री के.एस. रावत	होशंगाबाद	1005
27.	श्री सुरेन्द्र सिंह	कोटण्ड	505
28.	ओमवती शर्मा	श्रीनगर हापुड़	500
29.	श्री बबलू	वाल पवाना	500
30.	श्री सुरेशचन्द्र गुप्ता	उरई	1100
31.	श्री त्रिपुरारी पाण्डेय	मेडिसर	5000
32.	श्री जे.पी. गुप्ता	गंगापुर सिटी	500
33.	श्री पुरुषोत्तम चौरसिया	नागपुर	1000

34.	श्री साहिब सिंह सैंगर	उमरी	101
35.	श्री सुख सिंह यादव	उमरी	251
36.	श्री ललित शर्मा	कालका	2000
37.	श्री कालीराम गर्ग	दिल्ली	501
38.	श्री बलवंत सिंह	जीन्द	2100
39.	श्री पं. किशन	रोहतक	1100
40.	श्री श्याम लाल	हिसार	12000
41.	श्री कुलवन्त सिंह	जीन्द	1100
42.	प्रेमलता शर्मा	बुलन्दशहर	500
43.	श्री ओंकार नाथ श्रीवास्तव	सरौना	1100
44.	निर्मल कुलश्रेष्ठ	ग्वालियर	100
45.	श्री सौरभ अग्रवाल		500
46.	श्री तोता राम गुप्ता		500
47.	जगत लाल गुप्ता		700
48.	श्री राज ज्वैलर्स		251
49.	श्री पियुष ज्वैलर्स		201
50.	श्री नारायण चौरसिया		501
51.	श्री राजीव खण्डेलवाल		1100
52.	रतन शंकर तिवारी		1000

सिद्धयोग पत्रिका आय-व्यय 2016-2017

आय	रुपया	व्यय	रुपया
बैंक में जमा पिछला	372685=00	छपाई व कागज	152160=00
वार्षिक शुल्क	154741=00	लिफाफे	5000=00
सहयोग-	61278=00	कार्यालय खर्च	15000=00
मनीऑर्डर से	1800=00	बैंक में जमा	439625=00
बैंक ब्याज से	21281=00		
कुल योग	611785=00	कुल योग	611785=00

आश्रम समाचार

सीवन (अमराई धाम) रायबरेली का योग प्रचार कार्यक्रम

दिनांक 5 मार्च से 8 मार्च 2017 तक सीवन रायबरेली में योग प्रचार मण्डल के द्वारा कार्यक्रम रखा गया। यहाँ पर योगिराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के नाम से योग विद्यालय स्थापित है। दसवीं श्रेणी तक की कक्षायें यहाँ चल रही हैं। कार्यक्रम में प्रातः 5 से 6 बजे तक ध्यान, 6 से 8 बजे तक आसन, 8 से 11 बजे तक गीता पाठ व प्रवचन का कार्यक्रम चलता रहा। श्री सिद्धगुफा सवांई धाम से आचार्य डॉ. दासलाल जी महाराज ने कार्यक्रम का संचालन किया और योग सिद्धान्तों पर प्रवचन दिये। गोवर्धन वाले मोहन स्वरूप भी सम्मिलित रहे। कार्यक्रम में सुशील तिवारी, उमाशंकर त्रिपाठी तथा मण्डल के सारे भक्तों ने कार्यक्रम को सफल बनाया।

यह संसार

याद रखो ! यह संसार एक बहती नदी है, जिसमें सुविचार रूपी सुमन (फूल) बहे जा रहे हैं, और कुविचार रूपी काँटे भी। तुम्हारा कर्त्तव्य है कि तुम सुविचार रूपी सुमनों को तो पकड़ो! किन्तु कुविचार रूपी कांटों को कदापि नहीं। उनसे सदा दूर रहो। यह हो सकता है कि कभी–कभी तुम्हें सुविचार रूपी सुमनों को पकड़ते समय कुविचार रूपी कांटों में भी उलझना पड़े। किन्तु जानकर उलझो ! और यदि न चाहते हुए भी कभी उलझना पड़े तो उनमें उलझे मत रहो, उनसे निकलने का भरसक प्रयत्न करो, और अपने प्रबल पुरुषार्थ से उनकी उलझन से निकल कर, फिर सुविचार रूपी सुमनों को जाकर पकड़ लो।

स्वास्थ्य

योग-आसन

उत्तानपादासन

विधि – इस आसन के करने के लिये पहले सावधानी से सीधे लेट जायें, शरीर को ढीला छोड़ दें, उसके बाद अपने पैरों को धीरे–धीरे उपर की ओर उठाये, जब पैर लगभग एक हाथ भर उपर उठ जायें तब उनका अपने शरीर के बलाबल के अनुसार वहाँ ही रोक दें, कुछ देर रोके रहें, उसके बाद धीरे–धीरे नीचे को ले आयें व जमीन पर टिका दें, सारे शरीर को ढीला छोड़ दें। इसकी का नाम उत्तानपाद आसन है। इसी प्रकार धीरे–धीरे अपने पैरों को उठाकर इधर–उधर झुला भी सकते हैं व अभ्यास बढ़ जाने पर कई बार भी धीरे–धीरे ऊपर व नीचे ला सकते हैं।

समय– बहुत धीरे – धीरे करना चाहिये।

लाभ– इस आसन का प्रभाव मल विसर्जनी नाड़ियों पर अधिक पड़ता है अतः मल शोधक है। कोष्ठबद्धता का नाशक है। स्नायु दौर्बल्य को दूर करता है।

जीवन-दर्शन

स्वामी दर्शनान्द के उपदेश

* जिस धारणवती बुद्धि से परमात्मा को देखा जाता है, जब तक वह बुद्धि उत्पन्न न हो तब तक परमात्मा को कोई भी नहीं जान सकता। यह बुद्धि वेदादि शास्त्रों में पढ़ने से प्राप्त होती है। सत्पुरुषों के सत्संग से सुलभ होती है।

---

* विद्वान और सुशिक्षित व्यक्ति तो अनागा भविष्य के लिये हौ पुरुषार्थ करते हैं परन्तु मूर्ख व्यक्ति केवल वर्तमान के लिए।

---

* जो कर्म का पका हुआ फल है उसको बदलने की शक्ति किसी में नहीं। उसको बदलने के लिए परिश्रम करना आयु को व्यर्थ खोना है।

---

* जिस प्रकार हमें किसी मकान पर चढ़ने के लिए परिश्रम करना पड़ता है, परन्तु गिरने के लिए तनिक पैर फिसल जाना ही बहुत है, किसी श्रम की आवश्यकता ही नहीं, इसी प्रकार मनुष्य को धर्म के ऊँचे शिखर पर चढ़ने के लिए श्रम की आवश्यकता पड़ती है अधर्म तो स्वमेव हो जाता है।

---

* अच्छे और बुरे दो मार्गों से इच्छा की प्रवृत्ति होती है। तुम्हारा काम केवल इच्छा को बुरे मार्ग से रोककर अच्छे मार्ग में चलाना है।

---

* जब जीव ज्ञान के अनुसार कर्म करता है तो उसको सुख होता है। और जब वह कर्म को मुख्य मानकर ज्ञान को पीछे रखता है तो उसे दुःख होता देखकर नहीं चलता वह प्रायःठोकर खाता है। अतः अज्ञानपूर्वक किया गया काम ही दुःख का हेतु है।

प्रेषण कार्यालय :

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तो का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सैंवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

PRINTED MATTER BOOK-POST

श्री/सुश्री ____________________

____

____

☐☐☐☐☐☐☐

स मुक्तिपदमर्हति !

मोह एवं महामृत्युर्ममुक्षोर्वपुरादिषु।
मोहो विनिर्जितोयेन स मुक्तिपदमर्हति।।

अर्थात्

शरीरादि में मोह रखना ही मुमुक्षु की बड़ी भारी मौत है। जिसने मोह को जीत लिया है वही मुक्तिपद का अधिकारी बनता है।

संस्थापक:– योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज। मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ. दासलाल शर्मा के लिए राष्ट्रीय ब्लॉक एवं प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा–3 से मुद्रित एवं श्री योग प्रशिक्षण केन्द्र, सवाँई (एत्मादपुर) आगरा से प्रकाशित। आर.एन.आई. नं. UPHIN/2004/14566. सम्पादक : आचार्य ब्र. (डॉ.) दासलाल शर्मा